सुरेश चंद बनाम अजीत सिंह दहिया और अन्य

(विकास बहल जे. के समक्ष)

विकास बहल जे. के समक्ष

सुरेश चंद-------याचिकाकर्ता

बनाम

अजीत सिंह दहिया और अन्य------ उत्तरदातागण

2021 का सी आरएम-एम नंबर 48159

17 दिसंबर 2021

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 31, 353, 362, 425, 427,482-भारतीय दंड संहिता, 1860- धारा 302-शस्त्र अधिनियम, 1959, धारा 25- सीआरपीसी की धारा 482 के तहत याचिका दायर की गई। रद्द करने के आदेश के लिए जिसके तहत सी.आर.पी.सी. की धारा 353 के साथ पठित 362 के तहत आवेदन दायर किया गया। अनुमति दी गई और सजाएं एक साथ चलाने का आदेश दिया गया - याचिकाकर्ता को 302 आईपीसी और 25 आर्म्स एक्ट के तहत दोषी ठहराया गया - धारा 302 आईपीसी के तहत आजीवन कारावास लगाया गया - 5 साल की दो अलग-अलग सजाएं और 25 आर्म्स एक्ट के तहत दो घटनाओं के लिए कठोर कारावास लगाया गया - यह नहीं बताया गया कि आजीवन कारावास से पहले 5 साल की दो सजाएं चलनी थीं - दोषसिद्धि और सजा के खिलाफ अपील उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई थी, एसएलपी भी खारिज कर दी गई थी - शिकायतकर्ता द्वारा 353 सहपठित 362 सीआरपीसी के तहत आवेदन दायर किया गया था। परीक्षण न्यायालय के समक्ष **-याचिका की अनुमति।**

माना गया कि सीआरपीसी की धारा 31 का अवलोकन यह दिखाएगा कि यह प्रावधान करता है कि, जब किसी व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के एक मुकदमे में दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायालय के पास उसे ऐसे अपराधों के लिए निर्धारित कई दंडों की सजा देने की शक्ति होती है, जिसे देने के लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है; और ऐसी सज़ाएं जब कारावास से युक्त होती हैं तो एक की समाप्ति के बाद दूसरे को ऐसे क्रम में शुरू किया जाएगा जैसा न्यायालय निर्देशित कर सकता है, जब तक कि न्यायालय यह निर्देश न दे कि ऐसी सज़ाएं एक साथ चलेंगी। सी.पी.सी. की धारा 427 का अवलोकन इसके अतिरिक्त उप-धारा 2 से पता चलता है कि यदि कोई व्यक्ति पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा है, और बाद में दोषी ठहराए जाने पर, उसे एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो बाद की सजा समवर्ती रूप से चलेगी |

(15 पैरा)

आगे यह माना गया कि उपरोक्त प्रावधानों के साथ-साथ यहां ऊपर उल्लिखित निर्णयों से, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आएंगे :-

I) जहां एक मुकदमे में, एक व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है,

और सजा में आजीवन कारावास की सजा शामिल नहीं है, और सजा के फैसले और सजा के आदेश में यह निर्दिष्ट नहीं किया गया है कि सजाएं एक साथ चलनी हैं, तो ऐसी स्थिति में सजाएं लगातार चलेंगी। (इस संबंध में सुनील कुमार के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पैरा 10.2 की अंतिम पंक्तियों का संदर्भ दिया जा सकता है, जिसे यहां ऊपर दिया गया है और साथ ही माननीय संविधान पीठ के फैसले के पैरा 17 का भी हवाला दिया जा सकता है। मुथुरामलिंगम और अन्य (सुप्रा) के मामले में सुप्रीम कोर्ट, जिसे यहां ऊपर भी पुन: प्रस्तुत किया गया है)। II) जहां एक मुकदमे में, आजीवन कारावास की कई सजाएं दी जाती हैं, वहां दी गई आजीवन कारावास की सजाओं को लगातार चलाने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है और आवश्यक रूप से साथ-साथ चलना होगा, क्योंकि आजीवन कारावास का मतलब किसी के जीवन की पूरी अवधि होगी। हालाँकि, ऐसे वाक्यों को एक-दूसरे के ऊपर आरोपित किया जाएगा ताकि एक मामले में सक्षम प्राधिकारी द्वारा दी गई किसी भी छूट या कमीकरण के परिणामस्वरूप दूसरे मामले में कैदी को दी गई सजा में छूट न हो। (उसी के संबंध में मुथुरामलिंगम और अन्य के मामले (सुप्रा) में पारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पैरा 31 का संदर्भ दिया जा सकता है, जैसा कि यहां ऊपर दिया गया है)। III) जहां एक मुकदमे में, आरोपी को कई अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है और उसे एक अपराध के लिए आजीवन कारावास और अन्य अपराधों के लिए अवधि की सजा दी जाती है, तो यह परीक्षण न्यायालय के लिए खुला होगा कि वह दोषी को अवधि की सजा/अवधि की सजा भुगतने का निर्देश दे। उसकी उम्रकैद की सजा शुरू होने से पहले और ऐसा निर्देश वैध होगा। हालाँकि, ऐसा कोई भी निर्देश परीक्षण न्यायालय द्वारा उस विशेष मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद पारित किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में प्रयोग किया जाने वाला विवेक न्यायिक आधार पर होना चाहिए और इसे यंत्रवत् नहीं किया जाना चाहिए। हालाँकि, इसके विपरीत, न्यायिक जांच में टिक नहीं पाएगा, क्योंकि यदि परीक्षण न्यायालय निर्देश देता है कि आजीवन कारावास की सजा पहले शुरू होगी, और सजा की अवधि उसके बाद होगी, तो इसका मतलब यह होगा कि सजा की अवधि एक साथ चलेगी, जैसे कि एक बार कैदी अपना जीवन जेल में बिताता है, उसे आगे सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं है (इस संबंध में मुथुरामलिंगम और अन्य के मामले (सुप्रा) में की माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित फैसले के पैरा 32 का संदर्भ लिया जा सकता है) . IV). जब कोई व्यक्ति पहले से ही सावधि कारावास की सजा काट रहा है, उसे बाद में दोषी पाए जाने पर एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो ऐसी कारावास की अवधि या आजीवन कारावास उस अवधि के कारावास की समाप्ति पर शुरू होगा जिसके लिए वह पहले सजा काट चुका है। सजा सुनाई गई है, जब तक कि अदालत यह निर्देश न दे कि अगली सजा ऐसी पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी।

(इस संबंध में ऊपर दिए गए सीआरपीसी की धारा 427(1) के प्रावधानों का संदर्भ लिया जा सकता है), V) जब कोई व्यक्ति पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा हो, उसे बाद में दोषी ठहराए जाने पर कारावास की सजा सुनाई जाती है। अवधि या आजीवन कारावास, तो अगली सजा ऐसी पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी। (इस संबंध में सीआरपीसी की धारा 427(2) का संदर्भ यहां ऊपर दिया गया है)। उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, यह न्यायालय यह निर्धारित करना चाहेगा कि विवादित आदेश कानूनी रूप से संपोषणीय है या नहीं।

(21 पारा)

इसके अलावा यह माना गया कि धारा 353 का अवलोकन, जिसे यहां ऊपर पुन: प्रस्तुत किया गया है, और "निर्णय" शब्द से संबंधित है, साथ ही धारा 362, जिसे यहां भी पुन: प्रस्तुत किया गया है, और इस प्रस्ताव से संबंधित है कि न्यायालय अपने फैसले को बदल नहीं सकता है , किसी भी तरीके से, किसी पक्ष को निर्देश प्राप्त करने के लिए परीक्षण न्यायालय में वापस जाने का अधिकार न दें, जैसा कि उक्त आवेदन में मांगा गया था। उक्त धाराओं में से किसी में भी दोषसिद्धि वारंट को रद्द करने या किसी आदेश का पालन करने के लिए अधिकारियों को निर्देश जारी करने की परिकल्पना नहीं की गई है। एक बार जब अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने दिनांक 23.11.2006 के फैसले और दिनांक 29.11.2006 को सजा के आदेश के तहत अंततः मामले का निपटारा कर दिया था, अपील और एसएलपी जिसके खिलाफ पहले ही फैसला सुनाया जा चुका था, वर्तमान आवेदन को आगे बढ़ाते हुए, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ के समक्ष सजा के आदेश पारित होने के 13 साल की अवधि के बाद, सीआरपीसी की धारा 353 आर/डब्ल्यू 362 के तहत, यह कायम रखने योग्य नहीं था। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश कार्यात्मक अधिकारी बन गए थे, और इस प्रकार उक्त आवेदन पर विचार नहीं कर सकते थे।

(24 पारा)

आगे कहा गया कि उपरोक्त के मद्देनजर, यह न्यायालय दोहराता है कि प्रथम दृष्टया न्यायालय को एक मुकदमे में कारावास की कई सजाएं देते समय, स्पष्ट शब्दों में निर्दिष्ट करना चाहिए, कि क्या उक्त सजाएं समवर्ती या लगातार चलेंगी और मामले में, उन्हें लगातार चलना था, जिस क्रम (अनुक्रम) में वही चलना था।

(29 पारा)

सुमीत गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता,

गौरव वर्मा, अधिवक्ता और

समीर राठौड़, अधिवक्ता के साथ

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता संग्राम सिंह।

कर्मबीर सिंह नलवा, एडवोकेट एवं

प्रतिवादी संख्या 1/शिकायतकर्ता के लिए, अधिवक्ता चाकितन वी.एस. पप्ता और यजुर शर्मा, अधिवक्ता।

पी.एस. पॉल, अतिरिक्त. पीपी. प्रतिवादी संख्या 2 और 4 के लिए यूटी चंडीगढ़।

मनीष डडवाल, एएजी, हरियाणा, प्रतिवादी संख्या 3 और 5 के लिए। (वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से)

विकास बहल, जे. (मौखिक)

(1) यह सीआरपीसी की धारा 482 के तहत दायर याचिका है। धारा 302/307/34 के तहत दर्ज एफआईआर संख्या 255 दिनांक 01.09.2002 में 30.11.2019 के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 187 (अनुलग्नक पी -1) में अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.10.2021 को रद्द करने के लिए भारतीय दंड संहिता (इसके बाद इसे "आईपीसी" के रूप में संदर्भित किया जाएगा) और शस्त्र अधिनियम, 1959 (इसके बाद इसे 1959 के अधिनियम के रूप में संदर्भित किया जाएगा) की धारा 25 के तहत, पुलिस स्टेशन सिटी सोनीपत में, जिसके तहत प्रतिवादी द्वारा दायर आवेदन नंबर 1-अजीत सिंह दहिया को सीआरपीसी की धारा 362 के साथ पठित धारा 353 के तहत अनुमति दी गई थी और यह देखा गया था कि उपरोक्त एफआईआर में याचिकाकर्ता को जो सजा दी गई थी, वह लगातार चलती रहेगी और दोषसिद्धि वारंट भेजा जाएगा। जेल प्राधिकारियों को दिनांक 29.11.2006 को, जिसके तहत सजाओं को एक साथ चलाने का आदेश दिया गया था, उस पर विचार नहीं किया जा सका।

(2) याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया है कि वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता-सुरेश चंद के साथ दो अन्य व्यक्तियों, सोनू उर्फ वीरेश और शिव प्रकाश उर्फ पोली पर धारा 302 के तहत दर्ज एफआईआर संख्या 225 दिनांक 01.09.2002 में मुकदमा चलाया गया था। पुलिस स्टेशन, सिटी सोनीपत में आईपीसी की धारा 302/307/34 और 1959 के अधिनियम की धारा 25 और अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ द्वारा पारित दिनांक 23.11.2006 के फैसले के तहत, अकेले याचिकाकर्ता को आईपीसी की धारा 302 और के तहत दोषी ठहराया गया था। 1959 के अधिनियम की धारा 25 और सजा के आदेश दिनांक 29.11.2006 के तहत निम्नलिखित तरीके से सजा सुनाई गई: -

आईपीसी की धारा 302 के तहत	आजीवन कारावास और जुर्माना रु। जुर्माने के भुगतान में चूक होने पर 3 लाख या उसके वर्षों के लिए आर. आई. से गुजरना ।
1-9-2002 की घटना के लिए खंड 25 शस्त्र माग अधिनियम के तहत ।	5 साल के लिए कठोर कारावास से गुजरना और 5000 रुपये का जुर्माना देना या एक वर्ष की अवधि के लिए आगे आर. आई. से गुजरना ।

	जुर्माने का भुगतान न करने पर।
7-9,2002 की घटना के लिए शस्त्र अधिनियम की खंड 25 के तहत।	5 साल के लिए कठोर कारावास और 5000 रुपये का जुर्माना देना। या जुर्माने का भुगतान न करने पर एक वर्ष की अवधि के लिए आर. आई. से गुजरना ।

इस फैसले की एक प्रति अभियुक्त को निःशुल्क प्रदान की जाए। जुर्माने की राशि वसूल होने पर भी, उसका 1/3 भाग सभी मृतकों के परिवारों को धारा 357(1)(बी) सी.पी.सी. के अनुसार मुआवजे के रूप में दिया जाएगा। इस फैसले और सजा के आदेश की एक प्रति सीआरपीसी की धारा 365 के संदर्भ में जिला मजिस्ट्रेट चंडीगढ़ और जिला मजिस्ट्रेट सोनीपत को भेजी जाए। और फ़ाइल को उचित संकलन के बाद रिकॉर्ड में भेज दिया जाएगा।"

याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया है कि सजा के उपरोक्त आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि यह नहीं कहा गया था कि पांच-पांच साल के कारावास की दो अवधिया आजीवन कारावास से पहले चलनी थीं और इस प्रकार, आवश्यक निहितार्थ से, कारावास की सजा सुनाई गई थी। 01.09.2002 की घटना के लिए 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत पांच साल की सजा और 07.09.2002 की घटना के लिए 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत पांच साल की एक और अवधि की कैद, साथ-साथ चलने वाली थी। इसे आगे उजागर किया गया है कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने सजा सुनाते समय यह देखा था कि याचिकाकर्ता का अपराध करने का कोई मकसद नहीं था, न ही इसकी कोई पूर्व योजना थी क्योंकि यह एक आकस्मिक घटना थी जो उस समय विकसित हुई थी। स्वयं घटना स्थल और मृत व्यक्ति ही दोषी के परिसर में गए थे जहां घटना घटी थी।

याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा कन्विक्शन वारंट दिनांक 29.11.2006 (अनुलग्नक पी-4) का संदर्भ दिया गया है, जिसमें, यह विशेष रूप से उल्लेख किया गया था कि सभी मूल सजाएं एक साथ चलेंगी। इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि उक्त दोषसिद्धि वारंट पर अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ द्वारा विधिवत हस्ताक्षर किए गए थे, जिन्होंने दोषसिद्धि का निर्णय और सजा का आदेश पारित किया था, जैसा कि यहां ऊपर बताया गया है और उक्त दोषसिद्धि वारंट उसी तारीख को जारी किया गया था जिस दिन आदेश दिया गया था। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि उक्त निर्णय और दोषसिद्धि वारंट के आधार पर सजा पारित की गई, याचिकाकर्ता निश्चित था कि सभी अपराध एक साथ चलाए गए थे, इस प्रकार, उच्च न्यायालय के समक्ष दायर अपील के आधार पर, जिसकी एक प्रति अनुलग्नक पी 5 संलग्न की गई है, सजा के पहलू के समवर्ती न होने को

चुनौती देने वाला कोई मुद्दा नहीं उठाया गया। प्रत्येक आधार का विशिष्ट संदर्भ दिया गया है जो उक्त अपील में लिया गया था। आगे यह तर्क दिया गया है कि जब इस मामले पर इस न्यायालय की डिवीजन बेंच के समक्ष बहस हुई थी, तब भी याचिकाकर्ता द्वारा इस आशय का कोई तर्क नहीं उठाया गया था कि सजा को समवर्ती बनाया जाना चाहिए था। विशेष अनुमति याचिका (संक्षेप में "एसएलपी" के लिए) के आधारों का भी संदर्भ दिया गया है, जिसमें फिर से, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष याचिकाकर्ता द्वारा कोई आधार नहीं लिया गया था कि सजा एक साथ चलनी चाहिए, न ही ऐसा कोई तर्क दिया गया था माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उठाया गया और इसके लिए, अपील के आधार (अनुलग्नक पी-7) के साथ-साथ आपराधिक अपील संख्या 628 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 20.01.2016 का संदर्भ दिया गया है। 2012 का (अनुलग्नक पी-8)। यह तर्क दिया गया है कि यह पार्टियों के बीच एक स्वीकृत स्थिति थी कि सजा समवर्ती रूप से चलेगी जैसा कि कनविक्शन वारंट में दर्शाया गया था और याचिकाकर्ता, जो आजीवन कारावास की सजा काट रहा था, उक्त सजा वारंट के अनुसार और उसके बाद रिहा होने की उम्मीद थी। दोषसिद्धि वारंट जारी होने की तारीख से 13 वर्ष से अधिक की अवधि के दौरान, प्रतिवादी संख्या । द्वारा सीआरपीसी की धारा 362 के साथ पठित धारा 353 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित सजाओं का पालन करने और उक्त दोषसिद्धि वारंट पर कार्रवाई नहीं करने के लिए प्रतिवादी संख्या 1 से 3 (यहां प्रतिवादी संख्या 2 से 4) को निर्देश जारी करने के लिए। यह तर्क दिया गया है कि यद्यपि उक्त आवेदन में इस आशय के आरोप लगाए गए थे कि उक्त दोषसिद्धि वारंट जाली और मनगढ़ंत था, लेकिन इसे जाली और मनगढ़ंत नहीं पाया गया था और इसे विधिवत निष्पादित किया गया पाया गया था। प्रतिवादी नंबर 1 और 3 (यहां प्रतिवादी नंबर 2 और 4) द्वारा दायर उत्तर का भी संदर्भ दिया गया है, यानी अधीक्षक, मॉडल जेल, चंडीगढ़, जेल महानिदेशक, हरियाणा और जेल महानिरीक्षक और सुधार प्रशासन, यू.टी. चंडीगढ़ (अनुलग्नक पी-10) आवेदन पर, जिसमें कई आपत्तियां ली गई थीं, जिनमें आवेदन के रखरखाव योग्य न होने की आपत्ति और उक्त दस्तावेज की जालसाजी का जोरदार खंडन भी शामिल था। उक्त उत्तरदाताओं द्वारा दायर किए गए उत्तर के पैरा 1, 12 और 14 का विशेष संदर्भ दिया गया है। इसे यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> "1. यह कि वर्तमान आवेदन विचारणीय नहीं है और इस प्रकार, इसे खारिज किया जा सकता है।
>
> 12. यह कि आवेदन के पैरा क्रमांक 12 के तथ्य ग़लत, त्रुटिपूर्ण हैं और पुरजोर तरीक़े से खंडन किया गया है।

यह प्रस्तुत है कि वह दस्तावेज़ जो 29 नवंबर, 2006 को दोषसिद्धि का वारंट है और जो सक्षम क्षेत्राधिकार के माननीय न्यायालय द्वारा जारी किया गया था, न्यायालय के रिकॉर्ड का एक हिस्सा है और इसलिए, आवेदक द्वारा उत्तरदाताओं के खिलाफ लगाए गए आरोपों के संबंध में अदालत के दस्तावेजों की जालसाजी पूरी तरह से झूठी और तुच्छ है और बिना किसी भौतिक साक्ष्य के है।

14. यह कि आवेदन के पैरा संख्या 14 के तथ्य गलत, त्रुटिपूर्ण थे और इसलिए अस्वीकार कर दिए गए है। यह प्रस्तुत किया गया है कि आवेदक ने पत्र दिनांक 30 03.2019 के तथ्यों की गलत व्याख्या करके तथ्यों को पूरी तरह से तोड़-मरोड़ कर पेश किया है, यह पत्र दिनांक 30 03 2019 के माध्यम से कहा गया है, उत्तर देने वाले प्रतिवादी संख्या1 उत्तर देने वाले को प्रतिवादी संख्या 4 का मामला प्रस्तुत किया था। हरियाणा सरकार की नीति के अनुसार प्रतिवादी नंबर 2 की समय से पहले रिहाई के संबंध में विचार करने के लिए, माननीय न्यायालय द्वारा जारी किए गए दोषसिद्धि वारंट को उत्तरदाता नंबर 2 के ध्यान में लाना आवश्यक था। जिसके तहत माननीय न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 4 के मामले में सजाओं के एक साथ चलने के बारे में विशेष रूप से उल्लेख किया है और इसलिए, उत्तर देने वाले प्रतिवादी संख्या 1 ने उक्त पत्र में रिकॉर्ड से परे कुछ भी नहीं बताया है।

(3) इस तथ्य को उजागर करने के लिए याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा वर्तमान याचिकाकर्ता, जो उक्त कार्यवाही में प्रतिवादी संख्या 4 था, द्वारा दायर उत्तर (अनुलग्नक पी-11) का भी संदर्भ दिया गया है। दोषसिद्धि वारंट में कोई जालसाजी नहीं है और उक्त वारंट पर पीठासीन अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, जिन्होंने दोषसिद्धि और सजा का आदेश पारित किया था। उक्त उत्तर के पैरा 2 का विशिष्ट संदर्भ भी दिया गया है, जहां यह कहा गया है कि जब अभियोजन दो या दो से अधिक अपराधों से जुड़े एकल लेनदेन पर आधारित होता है, तो सजाएं एक साथ चलनी चाहिए। इसके अलावा नेतृत्व वरिष्ठ वकील द्वारा संदर्भ दिया गया है याचिकाकर्ता का हिरासत प्रमाणपत्र (अनुलग्नक पी-12) दिनांक 10.11.2021, जिसके अनुसार 10.11.2021 को, याचिकाकर्ता पहले ही 18 साल, 8 महीने और 18 दिनों की वास्तविक सजा काट चुका था और छूट सहित कुल अवधि 25 वर्ष 2 महीने और 19 दिन काट चुका था। आगे यह तर्क दिया गया कि जब याचिकाकर्ता, उक्त कैद भुगतने के बाद, होने की प्रक्रिया में जारी था, वर्तमान आवेदन दायर किया गया था, जिसके आधार पर, आक्षेपित आदेश पारित कर दिया गया था।

(4) आगे यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता को सीआरपीसी की धारा 482 के तहत कार्यवाही में उक्त आक्षेपित आदेश को चुनौती देने का पूरा अधिकार है, क्योंकि आक्षेपित आदेश के आधार पर, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने स्थिति को अस्थिर कर दिया जो 13 वर्षों तक स्थिर रहा। यह प्रस्तुत किया गया है कि यद्यपि, **मुथुरामलिंगम और अन्य बनाम राज्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पुलिस निरीक्षक द्वारा प्रतिनिधित्व किए गए निर्णय और । ओ.एम.चेरियन थंकाचान बनाम केरल राज्य और अन्य के मामले में पारित निर्णय** को विशेष रूप से आक्षेपित आदेश के पैरा 2 में देखा गया था, लेकिन हालांकि, उक्त दो निर्णयों और अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ द्वारा निर्धारित कानून पर विचार किए बिना, गुप्त तरीके से आक्षेपित आदेश पारित किया गया था, जो याचिकाकर्ता के जीवन के अधिकार का उल्लंघन है।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने जोरदार तर्क दिया है कि ऐसे कई कारक हैं जो दर्शाते हैं कि आक्षेपित आदेश अवैध और कानून के खिलाफ है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

(1) पहला कारक जिसे याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने सीआरपीसी की धारा 425 के प्रावधान का हवाला देते हुए उजागर किया है। जो सीआरपीसी के अध्याय XXXII-डी में निहित है, जो विशेष रूप से प्रदान करता है कि निष्पादन के लिए वारंट कौन जारी कर सकता है और उक्त प्रावधान के अनुसार, किसी सजा के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारंट या तो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किया जा सकता है। सज़ा, या उसके उत्तराधिकारी द्वारा उक्त पहलू पर, **हामिद रज़ा बनाम सेंट्रल जेल, रीवा और अन्य** नामक मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले पर भरोसा किया गया है। अधीक्षक सेंट्रल जेल, रीवा और अन्य ने **1985 क्रिल.जे 642** के रूप में रिपोर्ट की, जिसमें तर्क दिया गया कि एक मामले में, जहां सीआरपीसी की धारा 425 के तहत न्यायाधीश द्वारा वारंट जारी किया गया था, उक्त कार्य विद्वान न्यायाधीश द्वारा अपना प्रदर्शन करते समय किया गया माना जाता है। न्यायिक कार्य और इसे एक मंत्रिस्तरीय कार्य नहीं कहा जा सकता है, उक्त प्रावधान के आधार पर, साथ ही **हामिद रज़ा** (सुप्रा) में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले के आधार पर, यह तर्क दिया जाना चाहिए कि के तहत कनविक्शन वारंट जारी किया गया सीआरपीसी की धारा

2016(3) आरसीआर (सिल) 827

2014(4) आरसीआर (सीएच) 922

425 के प्रावधान को एक मंत्रिस्तरीय कार्य नहीं माना जा सकता है और वास्तव में, इसे जारी करते समय विद्वान न्यायाधीश अपना न्यायिक कार्य कर रहे थे और इस प्रकार, उक्त दोषसिद्धि वारंट, जो न्यायिक रिकॉर्ड का एक हिस्सा है और वास्तविक दस्तावेज पाया गया है, को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। जिस तरह से आक्षेपित आदेश में इसे नजरअंदाज करने की कोशिश की गई है। यह कहा गया है कि चूंकि सजा का आदेश मौन है, इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया जाता है कि दोषसिद्धि वारंट, वास्तव में, पूरे मुद्दे को इस आशय से स्पष्ट कर देगा कि पांच-पांच साल की दो अवधि की सजाएं एक साथ चलनी थीं या आजीवन कारावास की सजा के साथ। यह प्रस्तुत किया गया है कि यदि याचिकाकर्ता के उक्त तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है, तो, मामले में आगे कुछ भी उत्तेजित करने की आवश्यकता नहीं है।

(2) दूसरा कारक जिसे याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने उजागर किया है, वह **मुथुरामलिंगम** के मामले में संविधान पीठ के फैसले (सुप्रा) और **ओ.एम. चेरियन @थैंकाचन** पर आधारित है। **ओ.एम.चेरियन @थैंकाचन** का मामला (सुप्रा)। **मुथुरामलिंगम के मामले (सुप्रा)** में संविधान पीठ पर भरोसा करते हुए, यह तर्क दिया गया है कि आजीवन कारावास की सजा को जीवन भर की सजा के रूप में माना जाना चाहिए और इस प्रकार, कोई भी सजा जिसे आजीवन कारावास के बाद चलाने की मांग की जाती है, वह अनिवार्य रूप से समवर्ती होगी , यह पूरी तरह से अव्यवहारिक और अकल्पनीय होगा कि एक बार एक जीवन अवधि का मतलब किसी के पूरे जीवन से है, तो किसी के पूरे जीवन के बाद एक शब्द भी हो सकता है। उक्त निर्णय के विभिन्न पैराग्राफों का विशिष्ट संदर्भ दिया गया है, जिसमें यह देखा गया है कि न्यायालय वैध रूप से कैदी को आजीवन कारावास की सजा शुरू होने से पहले सजा भुगतने का निर्देश दे सकता है, लेकिन इसका अनुपालन संभव नहीं है क्योंकि सजा की अवधि का पालन नहीं किया जा सकता है। आजीवन कारावास की सजा भी अव्यावहारिक होगी और इस प्रकार, आवश्यक रूप से, यह सजा आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलेगी। इसी तरह के प्रभाव के लिए, ओ.एम. में की गई टिप्पणियाँ। **ओ.एम.चेरियन @थैंकाचन** के मामले (सुप्रा) पर भी प्रकाश डाला गया है, इसके अलावा **सुनील कुमार @ सुधीर कुमार और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** और **विकास यादव बनाम यूपी राज्य और अन्य**, **2021(5) एससीसी 560** , शीर्षक मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों का भी संदर्भ दिया गया ।

2016(4) आरसीआर (आपराधिक) 546 के रूप में रिपोर्ट की, और **हरविंदर सिंह @ पिंडर और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य** शीर्षक मामले में इस न्यायालय की डिवीजन बेंच द्वारा पारित फैसले के लिए। उपरोक्त प्रस्तुतियों का समर्थन करने के लिए **2020(1) आरसीआर (आपराधिक) 323** के रूप में रिपोर्ट की। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने बहुत निष्पक्षता से कहा है कि जहां तक डिवीजन बेंच के फैसले का सवाल है, उसके खिलाफ एसएलपी भी दायर की गई है और वह निर्णय के लिए लंबित है। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया है कि दोषसिद्धि वारंट से स्वतंत्र होने पर भी, सजा का आवश्यक अर्थ, जो याचिकाकर्ता को दिया गया था, वह यह है कि दो अवधि की सजा जो क्रमिक रूप से आजीवन कारावास की सजा के बाद आती है जैसा कि सजा के आदेश में निर्देशित किया गया है। , इस आशय के किसी विशिष्ट निर्देश के अभाव में कि सजा की अवधि को आजीवन कारावास से पहले पूरा किया जाना है, इसे आजीवन कारावास के साथ-साथ पढ़ा जाना चाहिए।

(3) याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा उजागर किया गया तीसरा पहलू यह है कि वर्तमान मामले में, वर्ष 2006 में दोषसिद्धि वारंट जारी किया गया था और 13 साल की अवधि के लिए, याचिकाकर्ता को यकीन था कि याचिकाकर्ता को उसकी सजा पूरी करने के बाद रिहा कर दिया जाएगा। कानून के अनुसार आजीवन कारावास। आक्षेपित आदेश में उपर्युक्त महत्वपूर्ण पहलू पर विचार नहीं किया गया है और 13 वर्षों से चली आ रही स्थिति को अस्थिर कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत प्रदत्त याचिकाकर्ता के जीवन के अधिकार का उल्लंघन हुआ है और इस प्रकार, आक्षेपित केवल उक्त आधार पर आदेश रद्द किये जाने योग्य है।

(6) उपरोक्त कारकों के अलावा, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने यह तर्क देने के लिए सीआरपीसी की धारा 427 और उसी की उपधारा 2 पर भी भरोसा किया है, जहां एक व्यक्ति जो पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा है , बाद में दोषसिद्धि पर, एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, बाद की सजा, जैसा कि उक्त प्रावधान के अनुसार प्रदान किया गया है, पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी और इस प्रकार, उसने तर्क दिया है कि यहां तक कि एक ऐसी स्थिति, जहां एक व्यक्ति को दो अलग-अलग अपराध करने का दोषी ठहराया गया है, जिनमें से पहले में, व्यक्ति को दी गई सजा आजीवन कारावास है, फिर किसी भी बाद की सजा, या तो अवधि या आजीवन कारावास, एक साथ चलनी होगी |

पहले सज़ा के साथ यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता के मामले को उस व्यक्ति के मामले से कमतर स्तर पर नहीं माना जा सकता है जिसने दो अलग-अलग अपराध किए हैं, जिससे दोनों अपराधों में उसे दोषी ठहराया गया है, और पहले अपराध के लिए आजीवन कारावास की सजा दी गई है। दूसरे अपराध के लिए सावधि सज़ा/आजीवन कारावास।

विद्वान वरिष्ठ वकील ने यह भी तर्क दिया है कि प्रतिवादी संख्या द्वारा दायर आवेदन। मैं यहां अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के समक्ष धारा 353 आर/डब्ल्यू 362 सीआर.पी.सी. के तहत, प्रतिवादी संख्या 1 से 3 तक के निर्देश के लिए, सुनवाई योग्य नहीं था। यह प्रस्तुत किया गया है कि उपरोक्त प्रावधानों में से कोई भी, यानी धारा 353 या 362 सीआरपीसी, मामले में शिकायतकर्ता या किसी अन्य पक्ष को अदालत के समक्ष ऐसा आवेदन दायर करने का अधिकार नहीं देता है, जिसने पहले ही अंतिम निर्णय पारित कर दिया था, और वह भी 13 साल बाद। वरिष्ठता आदेश पारित होने और उक्त वारंट जारी होने के बाद।

अंतिम तर्क के रूप में, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया है कि यदि वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों के कारण कोई शून्य है, तो भी, अभियुक्त के पक्ष में जो दृष्टिकोण/व्याख्या की जानी चाहिए, और अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा ऐसा नहीं किए जाने पर, उक्त आधार पर भी आक्षेपित आदेश को रद्द करने की मांग की गई है।

(7) याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने बहुत ही निष्पक्ष रूप से कहा है कि जहां तक तीनों सजाओं के कारण 3.10,000/- रुपये के जुर्माने का सवाल है, याचिकाकर्ता वर्तमान निर्णय की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने के लिए एक माह की अवधि के भीतर जमा तैयार है।

(8) इसके विपरीत, प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वकील ने वर्तमान याचिका का पुरजोर विरोध किया है और कहा है कि विवादित आदेश सही और कानून के अनुसार है और इस प्रकार, बरकरार रखा जाना चाहिए।

(9) प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वकील की पहली दलील यह है कि सीआरपीसी की धारा 482 के तहत दायर वर्तमान याचिका सुनवाई योग्य नहीं है क्योंकि वर्तमान याचिका दायर करने के कारण, दोषसिद्धि या आदेश के फैसले में कोई शब्द नहीं पढ़ा जा सकता है। सज़ा का. सीआरपीसी की धारा 353 के साथ-साथ सीआरपीसी की धारा 362 के प्रावधानों पर भरोसा करने की मांग की गई है, जिन्हें यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है।

> 353. निर्णय:-(1) किसी भी मुकदमे में निर्णय आपराधिक न्यायालय या मूल क्षेत्राधिकार पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में सुनाया जाएगा

मुकदमे की समाप्ति के तुरंत बाद या किसी आगामी समय पर पार्टियों या उनके वकील को नोटिस दिया जाएगा, -

(ए) संपूर्ण निर्णय सुनाकर; या

(बी) पूरे फैसले को पढ़कर; या

(सी) निर्णय के ऑपरेटिव भाग को पढ़कर और निर्णय के सार को उस भाषा में समझाकर जो अभियुक्त या उसके वकील द्वारा समझा जाता है।

(2) जहां उप-धारा (1) के खंड (ए) के तहत निर्णय सुनाया जाता है, पीठासीन अधिकारी इसे तुरंत लिखवाएगा, प्रतिलेख और उसके तैयार होते ही प्रत्येक पृष्ठ पर हस्ताक्षर करेगा। और उस पर खुली अदालत में फैसला सुनाए जाने की तारीख लिखें।

(3) जहां निर्णय या उसके ऑपरेटिव भाग को उप-धारा (1) के खंड (बी) या खंड (सी) के तहत पढ़ा जाता है, जैसा भी मामला हो, इसे खुले न्यायालय में पीठासीन अधिकारी द्वारा दिनांकित और हस्ताक्षरित किया जाएगा और यदि यह उसके अपने हाथ से नहीं लिखा गया है, तो निर्णय के प्रत्येक पृष्ठ पर उसके हस्ताक्षर होंगे।

(4) जहां निर्णय उप-धारा (1) के खंड (सी) में निर्दिष्ट तरीके से सुनाया जाता है, संपूर्ण निर्णय या उसकी एक प्रति तुरंत पार्टियों या उनके वकील के अवलोकन के लिए निःशुल्क उपलब्ध कराई जाएगी।

(5) यदि अभियुक्त हिरासत में है, तो उसे सुनाए गए फैसले को सुनने के लिए लाया जाएगा।

(6) यदि अभियुक्त हिरासत में नहीं है, तो न्यायालय द्वारा उसे सुनाए गए फैसले को सुनने के लिए उपस्थित होने की आवश्यकता होगी, सिवाय इसके कि मुकदमे के दौरान उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति को समाप्त कर दिया गया है और सजा केवल जुर्माने में से एक है या उसे बरी कर दिया गया है: बशर्ते कि, जहां एक से अधिक आरोपी हों और उनमें से एक या अधिक उस तारीख को अदालत में उपस्थित न हों जिस दिन फैसला सुनाया जाना है, पीठासीन अधिकारी, मामले के निपटारे में अनुचित देरी से बचने के लिए, उनकी अनुपस्थिति के बावजूद निर्णय सुनाएँ।

(7) किसी भी आपराधिक न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया जाएगा

केवल किसी भी पक्ष या उसके वकील की डिलीवरी के लिए अधिसूचित दिन या स्थान पर अनुपस्थिति, या पार्टियों या उनके वकील, या किसी को सेवा देने में किसी चूक, या सेवा में त्रुटि के कारण ही अमान्य माना जाएगा, या उनमें से सूचना का अमुक दिन और स्थान।

(8) इस धारा में किसी भी बात को किसी भी तरह से धारा 465 के प्रावधानों की सीमा को सीमित करने वाला नहीं माना जाएगा।

362 न्यायालय फैसले में बदलाव नहीं करेगा। इस संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य कानून द्वारा अन्यथा प्रदान किए गए को छोड़कर, कोई भी न्यायालय, जब किसी मामले के निपटान के लिए अपने निर्णय या अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर कर चुका हो, लिपिकीय या अंकगणितीय त्रुटि को सुधारने के अलावा उसमें परिवर्तन या समीक्षा नहीं करेगा। ।"

यहां ऊपर दिए गए प्रावधानों के आधार पर, यह तर्क दिया गया है कि किसी भी आपराधिक मामले में मुकदमे का फैसला खुली अदालत में सुनाया जाना है और उसके बाद, सीआरपीसी की धारा 362 के तहत वही अंतिम हो जाता है, यह विशेष रूप से प्रदान किया गया है कि एक बार हस्ताक्षर हो जाने के बाद न्यायालय फैसले को बदल नहीं सकता है और यहां तक कि उसकी समीक्षा की भी अनुमति नहीं है। यह प्रस्तुत किया गया है कि दोषसिद्धि वारंट में जिन शब्दों को दोषसिद्धि के फैसले और सजा के आदेश में पढ़ने की मांग की गई है, उन्हें दोषसिद्धि के फैसले और सजा के आदेश में नहीं पढ़ा जा सकता है और इस प्रकार, उन्हें अप्रासंगिक माना गया है। आक्षेपित आदेश द्वारा. धारा 482 के तहत वर्तमान याचिका की विचारणीयता के संबंध में, प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वकील ने **एमआर कुडवा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित फैसले का हवाला दिया है और विशेष रूप से पैरा 12 का उल्लेख किया है। उक्त निर्णय में यह तर्क दिया गया कि सीआरपीसी की धारा 427 के प्रावधान मूल मामले या अपील में लागू नहीं होने के कारण, विशेष अनुमति याचिका खारिज होने के बाद उच्च न्यायालय के समक्ष दायर एक अलग आवेदन को सुनवाई योग्य नहीं माना गया। यह तर्क दिया गया है कि उक्त निर्णय में, यह देखा गया था कि उच्च न्यायालय अपने अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता था क्योंकि उसने अपील में निर्णय पारित करते समय ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं किया था और इस प्रकार, सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उक्त आवेदन दायर किया था। उचित उपाय नहीं था।

(10) प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान वकील ने **सुनील कुमार @सुधीर कुमार** के मामले (सुप्रा) में, जो फैसला आया है याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा भी इस पर भरोसा किया गया। उपर्युक्त निर्णय में विशेष संदर्भ देते हुए पैरा 8.1, 8.3, 10.2 और 12 में, यह तर्क दिया गया है कि सीआरपीसी की धारा 31 के

(2007) 2 एससीसी 772

अनुसार, परीक्षण न्यायालय को निर्देश देने का विवेकाधिकार निहित है कि जब आरोपी को दो या दो से अधिक अपराधों के एक परीक्षण में दोषी ठहराया जाता है, तो सजाएं एक साथ चलेंगी या नहीं। ऐसे मामले में जहां परीक्षण न्यायालय ने सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश नहीं दिया है, तो उन्हें लगातार चलना होगा। आगे यह तर्क दिया गया है कि उपर्युक्त निर्णय के पैरा 13 में यह देखा गया था कि यह निर्देश देने की चूक कि क्या अभियुक्तों को दी गई सजाएं एक साथ चलेंगी या लगातार चलेंगी, अनिवार्य रूप से अभियुक्तों के खिलाफ लागू होती हैं, क्योंकि जब तक न्यायालय द्वारा इसके विपरीत निर्देश नहीं दिया जाता है सीआरपीसी की धारा 31 की स्पष्ट व्याख्या के अनुसार, कई सजाएं लगातार चलनी हैं। **मुथुरामलिंगम** के मामले (सुप्रा) और **ओ.एम. चेरियन @ थंकाचन के मामला (सुप्रा)** में व्याख्याओं के साथ पढ़ें। यह भी प्रस्तुत किया गया कि लगातार चलने का निर्देश देने से वास्तव में वाक्यों को समवर्ती रूप से चलाने का कारण नहीं बनाया जा सकता है। इस तर्क को आगे बढ़ाते हुए, प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान वकील ने सीआरपीसी की धारा 31 का हवाला दिया गया है। यह तर्क देने के लिए कि चूंकि दोषसिद्धि का निर्णय और सजा का आदेश वाक्यों को चलाने के पहलू के संबंध में मौन है यानी चाहे लगातार या समवर्ती, इस प्रकार, इसका अर्थ यह होगा कि सजाएं लगातार चलनी हैं।

(11) प्रतिवादी संख्या 2 और 4 के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि उनके रुख के अनुसार, दोषसिद्धि वारंट सही ढंग से जारी किया गया था और उक्त दस्तावेज़ जाली या मनगढ़ंत नहीं था और वे उक्त दोषसिद्धि वारंट के अनुसार आगे बढ़ने के लिए कर्तव्यबद्ध थे। उसी के अनुरूप, समय से पहले रिहाई की प्रक्रिया सही ढंग से शुरू की गई है। हालाँकि, न्यायालय के एक अधिकारी के रूप में, उन्होंने प्रस्तुत किया है कि जब मामला माननीय के समक्ष तय हो चुका है, तो दोषसिद्धि के फैसले और सजा के आदेश में कोई भी शब्द जोड़ने या कोई शब्द घटाने के लिए माननीय सुप्रीम कोर्ट बद्धया नहीं होगा।.

(12) प्रतिवादी संख्या 5 राज्य के विद्वान वकील ने कहा है कि विवादित आदेश वैध रूप से पारित किया गया है और इसे बरकरार रखा जाना चाहिए और वर्तमान याचिका खारिज की जानी चाहिए।

(13) इस न्यायालय ने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है और उन निर्णयों को भी देखा है जिनका हवाला पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने दिया है।

(14) इससे पहले कि अदालत इस मामले के अजीबोगरीब तथ्यों पर गौर करे और आक्षेपित आदेश की वैधता के लिए, यह आवश्यक होगा प्रावधानों के साथ-साथ निर्णयों पर भी विचार करें, जो वर्तमान मामले का निर्णय इसके लिए प्रासंगिक हैं ।

(15) सी.आर.पी.सी. की धारा 31 और 427. यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"31. एक मुकदमे में कई अपराधों की सजा के मामलों में सजा- (1) जब किसी व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के एक मुकदमे में दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायालय, भारतीय दंड संहिता की धारा 71 (1860 के 45) के प्रावधानों के अधीन हो सकता है।, उसे ऐसे अपराधों के लिए निर्धारित कई दंडों की सजा दें, जिन्हें देने के लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है; ऐसी सजाएं जब कारावास से युक्त होती हैं, तो एक की समाप्ति के बाद दूसरे की समाप्ति के बाद **न्यायालय द्वारा निर्देशित आदेश के अनुसार** शुरू की जाती है, जब तक कि न्यायालय निर्देश न दे। कि ऐसी सज़ाएँ साथ-साथ चलेंगी।

(2) लगातार सजाओं के मामले में, न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि कई अपराधों के लिए कुल सजा उस सजा से अधिक हो जो वह एक अपराध के दोषी होने पर देने में सक्षम है, अपराधी को उच्च न्यायालय के समक्ष मुक़दमे के लिए भेजने के लिए:

उपलब्ध कराया---

(ए) किसी भी मामले में ऐसे व्यक्ति को चौदह वर्ष से अधिक अवधि के कारावास की सजा नहीं दी जाएगी;

(बी) कुल सजा उस सजा की दोगुनी से अधिक नहीं होगी जो अदालत एक अपराध के लिए देने में सक्षम है।

(3) किसी दोषी व्यक्ति द्वारा अपील के प्रयोजन के लिए, इस धारा के तहत उसके खिलाफ पारित लगातार सजाओं का योग एक एकल सजा माना जाएगा।

427. पहले से ही किसी अन्य अपराध के लिए सजा पाए अपराधी को सजा:-(1) जब पहले से ही कारावास की सजा काट रहे किसी व्यक्ति को बाद की सजा पर कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो ऐसा कारावास या आजीवन कारावास की समाप्ति पर शुरू होगा वह कारावास जिसके लिए उसे पहले सज़ा सुनाई गई है, जब तक कि अदालत यह निर्देश न दे कि अगली सज़ा ऐसी पिछली सज़ा के साथ-साथ चलेगी:

बशर्ते कि जहां किसी व्यक्ति को धारा 122 के तहत आदेश द्वारा कारावास की सजा सुनाई गई हो सुरक्षा प्रदान करने पर, ऐसी सजा भुगतने के दौरान,

ऐसे आदेश देने से पहले किए गए अपराध के लिए कारावास की सजा सुनाई जाती है, बाद की सजा तुरंत शुरू होगी।

(2) जब पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहे किसी व्यक्ति को बाद की सजा पर एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो बाद की सजा ऐसी पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी।

सीआरपीसी की धारा 31 का अवलोकन यह दिखाएगा कि यह प्रावधान करता है कि जब किसी व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के एक मुकदमे में दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायालय के पास उसे ऐसे अपराधों के लिए सजा देने की शक्ति होती है, जिसके लिए निर्धारित कई दंड दिए जाने चाहिए, जिसे देने के लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है, और ऐसी सजाएं जब कारावास से मिलकर बनता है तो एक की समाप्ति के बाद दूसरे को ऐसे क्रम में शुरू करना होगा जैसा कि न्यायालय निर्देशित कर सकता है, जब तक कि न्यायालय यह निर्देश न दे कि ऐसी सजाएं एक साथ चलेंगी। सीआरपीसी की धारा 427 का अवलोकन इसके अलावा इसकी उप-धारा 2 यह दर्शाती है कि यदि कोई व्यक्ति पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा है, और बाद में दोषी ठहराए जाने पर उसे एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो बाद की सजा इस तरह के साथ समवर्ती रूप से चलेगी।

(16) माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई निर्णयों में उन मामलों में विभिन्न सिद्धांत निर्धारित किए हैं जहां एक सजा आजीवन कारावास है, जैसा कि वर्तमान मामले में है, और इस स्तर पर उन पर ध्यान देना प्रासंगिक होगा। मुथुरामलिंगम मामले (सुप्रा) में संवैधानिक पीठ के फैसले ने इस सवाल पर विचार किया है कि "क्या एक दोषी को हत्याओं की एक श्रृंखला का दोषी पाए जाने पर लगातार आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है, जिसके लिए उस पर एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया गया है।" "उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

"इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों वाली एक पीठ ने हमें निम्नलिखित संक्षिप्त लेकिन दिलचस्प प्रश्न भेजा है:

"क्या किसी दोषी को कई हत्याओं का दोषी पाए जाने पर लगातार आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है, जिसके लिए उस पर एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया गया है?"

4. जब अपीलें इस न्यायालय की तीन न्यायाधीश पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आईं,

(विकास बहल जे. के समक्ष)

अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने अपनी चुनौती को परीक्षण न्यायालय द्वारा जारी निर्देश की वैधता तक ही सीमित रखा है और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई है कि अपीलकर्ताओं में से प्रत्येक को कई वर्षों के लिए आजीवन कारावास की सजा दी गई है। उनके द्वारा कथित तौर पर की गई हत्याएं लगातार चलेंगी न कि एक साथ। यह तर्क दिया गया कि **आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में, "सी.आर.पी.सी.") की धारा 31 के संदर्भ में अपीलकर्ताओं को उनके द्वारा की गई कथित विभिन्न हत्याओं के लिए दी गई आजीवन कारावास की सजा एक साथ चल सकती है और** परीक्षण न्यायालय **और हाई कोर्ट के आदेश के अनुसार लगातार नहीं। उस प्रस्तुतिकरण के समर्थन में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय पर भरोसा रखा गया था। ओ.एम. चेरियन @थंकाचन बनाम केरल राज्य @ अन्य, (2015) 2 एससीसी 501 और दुर्योधन राउत बनाम उड़ीसा राज्य (2015) 2 एससीसी 783 में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय।**

XXX XXX

6. हमने पक्षों के विद्वान वकीलों को सीआरपीसी की धारा 31 के बारे में काफी विस्तार से सुना है, जो एक ही मुकदमे में कई अपराधों की सजा के मामलों में सजा से संबंधित है।

"31. एक मुकदमे में कई अपराधों की सजा के मामलों में सजा।

(1) जब किसी व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के एक मुकदमे में दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायालय, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 71 के प्रावधानों के अधीन, उसे ऐसे अपराधों के लिए निर्धारित कई दंडों की सजा दे सकता है। जिसके लिए ऐसा न्यायालय दण्डित करने में सक्षम है; ऐसी सज़ाएं जब कारावास से युक्त होती हैं तो एक की समाप्ति के बाद दूसरे को ऐसे क्रम में शुरू किया जाएगा जैसा न्यायालय निर्देशित कर सकता है, जब तक कि न्यायालय यह निर्देश न दे कि ऐसी सज़ाएं एक साथ चलेंगी।

(2) लगातार सजाओं के मामले में, न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि कई अपराधों के लिए कुल सजा उस सजा से अधिक हो जो वह एक अपराध के दोषी होने पर देने में सक्षम है, अपराधी को उच्च न्यायालय समक्ष मुक़दमे के लिए भेजा जाए :

बशर्ते कि-

(ए) किसी भी मामले में ऐसे व्यक्ति को चौदह वर्ष से अधिक अवधि के कारावास की सजा नहीं दी जाएगी;

(बी) कुल सजा उस सजा की दोगुनी से अधिक नहीं होगी जो अदालत एक अपराध के लिए देने में सक्षम है।

(3) किसी दोषी व्यक्ति द्वारा अपील के प्रयोजन के लिए, इस धारा के तहत उसके खिलाफ पारित लगातार सजाओं का योग एक एकल सजा माना जाएगा।

7. उपरोक्त को सावधानीपूर्वक पढ़ने से पता चलेगा कि प्रावधान केवल उन मामलों में लागू होता है जहां दो आवश्यक बातें पूरी होती हैं। (1) एक व्यक्ति को एक मुकदमे में दोषी ठहराया जाता है और (2) मुकदमा दो या दो से अधिक अपराधों के लिए होता है। यह केवल तभी होता है जब ये दोनों शर्तें पूरी हो जाती हैं कि अदालत अपराधी को उसके द्वारा किए गए अपराधों के लिए निर्धारित कई दंडों की सजा दे सकती है, बशर्ते कि अदालत अन्यथा ऐसी सजा देने में सक्षम हो। महत्वपूर्ण बात यह है कि अदालत दोषी द्वारा किए गए कई अपराधों के लिए जो सजा देने का निर्णय ले सकती है, वह सजा एक सजा की समाप्ति के बाद शुरू होगी और दूसरी सजा की समाप्ति के बाद ऐसे क्रम में होगी जैसा कि अदालत निर्देश दे सकती है, जब तक कि अदालत अपने विवेक से ऐसा आदेश न दे। सज़ा एक साथ चलेगी. धारा 31 की उप-धारा (2) स्पष्ट रूप से पढ़ने पर अदालत के लिए अपराधी को उच्च न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए भेजना अनावश्यक हो जाता है क्योंकि कई अपराधों के लिए कुल सजा उस सजा से अधिक होती है जिसके लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है। पुरस्कार में हमेशा प्रावधान किया गया है कि किसी भी मामले में सजा पाने वाले व्यक्ति को 14 साल से अधिक की अवधि के लिए कैद नहीं किया जा सकता है और कुल सजा उस सजा से दोगुनी से अधिक नहीं होगी जो अदालत एक अपराध के लिए देने में सक्षम है। धारा 31(1) की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने ओ.एम. चेरियन के मामले (सुप्रा) में घोषित किया गया कि **यदि किसी दोषी को दो आजीवन कारावास की सजा दी जाती है तो अदालत को अनिवार्य रूप से उन सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश देना चाहिए।**

8. इसी आशय का दुर्योधन राऊत के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय है जिसमें इस न्यायालय ने यह विचार किया कि चूंकि आजीवन कारावास का

मतलब है कि पूरे जीवन काल की कैद, एक ही मुकदमे में कई अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाने पर लगातार सजा देने का कोई सवाल ही नहीं था। धारा 31 की उप-धारा (2) के प्रावधान पर भरोसा करते हुए, इस न्यायालय ने माना कि जहां एक व्यक्ति को कई अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है, जिसमें एक ऐसा अपराध भी शामिल है जिसके लिए आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है, धारा 31 (2) का प्रावधान ऐसी सजाओं को लगातार चलाने से रोक देगा।.

9. उपरोक्त दो घोषणाओं से प्रतीत होता है कि आजीवन कारावास की सजा लगातार न चलने के पीछे का तर्क इस तथ्य में निहित है कि आजीवन कारावास का तात्पर्य दोषी के सामान्य जीवन के अंत तक कारावास से है। यदि वह प्रस्ताव सही है, तो ओ.एम. में इस न्यायालय के निर्णयों के अनुपात में अंतर्निहित तर्क। चेरियन और दुर्योधन राउत मामले (सुप्रा) भी समान रूप से उचित होंगे। फिर इस बात की जांच करने की आवश्यकता है कि क्या आजीवन कारावास का अर्थ वास्तव में दोषी के सामान्य जीवन के अंत तक कारावास है, जैसा कि ओ.एम. में देखा गया है। चेरियन और दुर्योधन राऊत के मामले (सुप्रा)। वह प्रश्न, हमारी सुविचारित राय में, अब पूर्ण नहीं है, इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला द्वारा इसकी जांच की गई है और सकारात्मक उत्तर दिया गया है। हम इस स्तर पर उनमें से कुछ निर्णयों का लाभपूर्वक उल्लेख कर सकते हैं।

XXX XXX

17. इस प्रकार, कानूनी स्थिति काफी अच्छी तरह से स्थापित है कि आजीवन कारावास अपराधी के शेष जीवन के लिए एक सजा है, जब तक कि शेष सजा को सक्षम प्राधिकारी द्वाराभारी दण्ड के स्थान पर हल्का दण्ड देना या प्रेषित नहीं किया जाता है। ऐसा होने पर, सीआरपीसी के तहत धारा 31 के प्रावधान। इसकी व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि यह मूल सिद्धांत के अनुरूप हो कि आजीवन कारावास की सजा के लिए कैदी को अपना शेष जीवन जेल में बिताना होगा। **ऐसा कोई भी निर्देश जिसमें अपराधी को दो बार आजीवन कारावास की सज़ा भुगतने की आवश्यकता हो, असंगत और अतार्किक होगा क्योंकि यह इस तथ्य की उपेक्षा करेगा कि अन्य सभी जीवित प्राणियों की तरह मनुष्य के पास जीने के लिए केवल एक जीवन है। तो समझा जाता है कि धारा 31(1) लगातार सज़ाओं को चलाने की अनुमति केवल तभी देगी जब ऐसी सज़ाएं आजीवन कारावास की सज़ा न हों। हमारी राय में यही एकमात्र तरीका है जिससे कोई स्पष्ट से बच सकता है। एक कैदी को लगातार दो आजीवन कारावास की**

सजा भुगतना असंभव है।

XXX XXX

25. जबकि हमें इस प्रस्ताव की सत्यता के बारे में कोई संदेह नहीं है कि दो आजीवन कारावास की सजा को लगातार चलाने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है, हमें नहीं लगता कि धारा 31 (2) के परंतुक में सॉलिस कहने का कारण है। सीआरपीसी की धारा 31(2) उन स्थितियों से निपटता है जहां लगातार सजा सुनाने वाला न्यायालय उन कई अपराधों के लिए कुल सजा देने में सक्षम नहीं है जिनके लिए दोषी पाए जाने पर कैदी को सजा दी जा रही है। उप-धारा (2) को ध्यान से पढ़ने से पता चलता है कि इसका संबंध केवल उन स्थितियों से है जहां सजा देने और उसे लगातार चलाने का निर्देश देने वाली अदालतें किसी एक अपराध के लिए दोषी पाए जाने पर कुल सजा देने में सक्षम नहीं हैं। प्रावधान में आगे कहा गया है कि उप-धारा (2) के तहत आने वाले मामलों में, सजा किसी भी मामले में 14 साल से अधिक नहीं होगी और कुल सजा उस सजा की दोगुनी से अधिक नहीं होगी जिसे अदालत देने में सक्षम है। अब सत्र न्यायालय द्वारा विचारित मामलों में, मृत्युदंड सहित कानून द्वारा स्वीकृत कोई भी सजा देने की अदालत की शक्ति पर कोई सीमा नहीं है। इसलिए, उप-धारा (2) का सत्र न्यायालय द्वारा विचार किए गए मामले पर कोई लागू नहीं होगा और न ही उप-धारा (2) सत्र न्यायालय द्वारा दिए जाने वाले दंडों को लगातार चलाने के निर्देश पर रोक लगाएगा।

26. जिस हद तक दुर्योधन राऊत मामला (सुप्रा) इस निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए उपधारा (2) के प्रावधान पर निर्भर करता है कि लगातार सजाएं चलाने का निर्देश अस्वीकार्य है, यह कानून को सही ढंग से नहीं बताता है, **तब भी जब यह निष्कर्ष निकलता है कि आजीवन कारावास का मतलब है पूरे स्पैन्जोलोज़ के जीवन और लगातार आजीवन कारावास की सज़ा नहीं दी जा सकती, अन्यथा यह उचित और स्वीकार्य है।**

31. निष्कर्षतः प्रश्न का हमारा उत्तर नकारात्मक है।

हमारा मानना है कि कई हत्याओं के लिए कई सजाएं दी जा सकती हैं या अन्य अपराधों के लिए आजीवन कारावास की कई सजाएं दी जा सकती हैं

इस प्रकार दी गई आजीवन कारावास की सजा को लगातार चलाने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, ऐसे वाक्यों को एक-दूसरे के ऊपर अधिरोपित किया जाएगा ताकि किसी एक मामले में सक्षम प्राधिकारी द्वारा दी गई किसी भी छूट या कमीकरण के परिणामस्वरूप दूसरे कैदी को दी गई सजा में स्वत: ही छूट न हो जाए।

32. अलग होते समय, हम इस मामले के एक और आयाम से निपट सकते हैं, जो हमारे सामने बहस कर रहा है, अर्थात् क्या न्यायालय आजीवन कारावास और अवधि की सजा को लगातार चलाने का निर्देश दे सकता है। इस पहलू पर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए तर्क दिया गया कि अपीलकर्ताओं को आजीवन कारावास की सजा के अलावा विभिन्न अवधि के कारावास की सजा सुनाई गई है। उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई परीक्षण न्यायालय के निर्देश यह है कि उक्त अवधि की सजाएं लगातार चलेंगी। अपीलकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि निर्देश का यह हिस्सा भी कानूनी रूप से उचित नहीं है, क्योंकि एक बार जब कैदी को आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो उसे दी गई सजा की अवधि साथ-साथ चलनी चाहिए। हालाँकि, हम ऐसा नहीं सोचते। सीआरपीसी की धारा 31 में प्रयुक्त भाषा को देखते हुए अदालत की यह शक्ति कि सजा किस क्रम में चलेगी, निर्विवाद है। इसलिए, अदालत वैध रूप से यह निर्देश दे सकती है कि कैदी को अपनी उम्रकैद की सजा शुरू होने से पहले तीसरी सजा काटनी होगी। इस तरह का निर्देश पूरी तरह से वैध होगा और धारा 31 के अनुरूप होगा। हालांकि, इसका उलटा सच नहीं हो सकता है क्योंकि अगर अदालत आजीवन कारावास की सजा पहले शुरू करने का निर्देश देती है तो इसका मतलब यह होगा कि सजा की अवधि साथ-साथ चलेगी। ऐसा इसलिए क्योंकि एक बार जब कैदी अपनी जिंदगी जेल में बिता लेता है तो उसे आगे कोई सजा भुगतने का सवाल ही नहीं उठता। नीचे दिए गए न्यायालय के निर्देश में किसी संशोधन या परिवर्तन की आवश्यकता है या नहीं, यह एक ऐसा मामला है जिससे हमें कोई सरोकार नहीं है। अपील की सुनवाई करने वाली नियमित पीठ पिछले पैराग्राफ में हमने जो कहा है, उसे ध्यान में रखते हुए मामले के उस पहलू से निपटने के लिए स्वतंत्र होगी।Xxx xxx"

उक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलेगा कि प्रस्ताव पर विचार करते समय, जैसा कि यहां ऊपर कहा गया है, और सीआरपीसी की धारा 31 के प्रावधानों पर विचार करने के बाद, यह पाया गया था कि यह स्थापित कानून है आजीवन कारावास अपराधी के शेष जीवन के लिए एक सजा है, जब तक कि शेष सजा सक्षम प्राधिकारी द्वारा कम नहीं की जाती है और यह आगे देखा

गया कि सीआरपीसी की धारा 31 के प्रावधान की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि यह मूल सिद्धांत के अनुरूप हो कि आजीवन कारावास की सजा के लिए कैदी को अपना शेष जीवन जेल में बिताना होगा और इस प्रकार, कोई भी निर्देश जिसके लिए अपराधी को दो बार आजीवन कारावास की सजा भुगतनी होगी, असंगत और तर्कहीन होगा। क्योंकि यह इस तथ्य की उपेक्षा करेगा कि मनुष्य, अन्य सभी जीवित प्राणियों की तरह, जीने के लिए केवल एक ही जीवन है। इस प्रकार, यह पाया गया कि सीआर.पी.सी. की धारा 31(1) सज़ाओं को लगातार चलाने की अनुमति केवल तभी दी जाएगी जब ऐसी सज़ाएँ आजीवन कारावास की सज़ा न हों। आगे यह देखा गया कि यदि दो आजीवन कारावास की सज़ाएं थीं, तो ऐसी सज़ाओं को लगातार चलाने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है, लेकिन फिर भी उन्हें एक-दूसरे पर आरोपित किया जाएगा ताकि सक्षम प्राधिकारी द्वारा दी गई किसी भी छूट या कम्युटेशन का वास्तव में परिणाम न हो। दूसरे के लिए कैदी को दी गई सज़ा की माफ़ी महत्वपूर्ण बात यह है कि उक्त निर्णय के अंतिम लेकिन एक पैरा में, सवाल यह है कि "क्या अदालत आजीवन कारावास और अवधि की सज़ा को लगातार चलाने का आदेश दे सकती है?" माना जाता था। यह देखा गया कि अदालत कैदी को उसकी आजीवन कारावास की सजा शुरू करने से पहले सजा की अवधि पूरी करने का निर्देश दे सकती है और ऐसा निर्देश वैध होगा और सीआरपीसी की धारा 31 के अनुरूप होगा, लेकिन इसके विपरीत, हालांकि, इस पर विचार नहीं किया जाएगा। कानूनी रूप से व्यवहार्य होना चाहिए क्योंकि मामले में, न्यायालय को पहले आजीवन कारावास शुरू करने का निर्देश देना था, इसका अनिवार्य रूप से अर्थ यह होगा कि सजा की अवधि समवर्ती रूप से चलेगी और यह सिद्धांत और स्थापित कानून के आधार पर था, कि एक बार कैदी उन्होंने अपना जीवन जेल में बिताया है, फिर उन्हें आगे सज़ा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं था। इस प्रकार, ऐसी स्थिति में, जहां सजा शब्द को आजीवन कारावास की सजा के साथ चलना था, इसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ होगा कि शब्द की सजा आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलेगी।

(17) माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय ओ.एम. चेरियन @ थैंकाचन का मामला (सुप्रा) भी इस स्तर पर ध्यान देने योग्य है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अंश यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं:

XXX XXX

4. सबूतों पर विचार करने पर, परीक्षण न्यायालय ने अपीलकर्ता/प्रथम आरोपी को आईपीसी की धारा 498 ए के तहत दोषी ठहराया और उसे दो साल की कठोर सजा सुनाई गई और 5,000/-

रुपयेका जुर्माना अदा करना होगा और जुर्माना न देने पर एक वर्ष का अतिरिक्त कारावास भुगतना होगा। आईपीसी की धारा 306 के तहत दंडनीय अपराध के लिए, परीक्षण न्यायालय ने उसे सात साल के कठोर कारावास और 50,000/- रुपये का जुर्माना भरने की सजा सुनाई और जुर्माना न देने पर तीन साल की अतिरिक्त कैद की सजा सुनाई। अपीलकर्ता की मूल सजाओं को लगातार चलाने का आदेश दिया गया। अभियुक्त 2 से 4 को आईपीसी की धारा 498 ए के तहत दोषी ठहराया गया और दो साल की कैद और रुपये का जुर्माना भरने की सजा सुनाई गई। 5,000/- एक वर्ष की डिफ़ॉल्ट शर्त के साथ। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि की पुष्टि की और सभी आरोपियों को कारावास की सजा भी सुनाई।

13 धारा 31(1) सी.आर.पी.सी. अदालत द्वारा उस आदेश को निर्दिष्ट करने के लिए एक और निर्देश दिया गया है जिसमें एक विशेष सजा अन्य की समाप्ति के बाद शुरू होगी जब अदालतें आजीवन कारावास की सजा और निश्चित अवधि के लिए कारावास की सजा भी सुनाती हैं तो कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। ऐसे मामलों में, यदि न्यायालय यह निर्देश नहीं देता है कि सजाएं एक साथ चलेंगी, तो धारा 31 (1) सीआर पी.सी.. के संचालन से सजाएं लगातार चलेंगी। दोषी को पहले आजीवन कारावास की सजा भुगतने और उसके बाद निश्चित अवधि के लिए कारावास की बाकी सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं है और ऐसा कोई भी निर्देश अव्यवहारिक होगा। **चूँकि आजीवन कारावास की सज़ा का मतलब दोषी के सामान्य जीवन के अंत तक जेल में रहना है, इसलिए निश्चित अवधि के कारावास की सज़ा आवश्यक रूप से आजीवन कारावास के साथ-साथ चलनी चाहिए। ऐसे मामले में, यह उचित होगा यदि सत्र न्यायाधीश सजाओं को एक साथ चलाने के निर्देश जारी करने में अपने विवेक का प्रयोग करें। इसी तरह यदि दोषी को दो आजीवन कारावास की सजा दी जाती है, तो आवश्यक रूप से, अदालत को उन सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश देना होगा।**

Xxx xxx

20. सीआर.पी.सी. की धारा 31 के तहत. दो या दो से अधिक अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाने की स्थिति में सजा को एक साथ चलाने का आदेश देना न्यायालय के पूर्ण विवेक पर छोड़ दिया गया है। अदालतों द्वारा इस तरह के विवेक के प्रयोग के मामले में कोई भी सख्त रुख अपनाना मुश्किल है। कुल मिलाकर, ट्रायल न्यायालय और

अपीलीय अदालतों ने अभियुक्तों को दिए जाने वाले लाभ के पक्ष में, सजाओं को एक साथ चलाने के निर्देश जारी करने के लिए अपने विवेक का इस्तेमाल किया है। किसी दिए गए मामले में सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश जारी किया जाना चाहिए या नहीं, यह अपराध की प्रकृति या किए गए अपराधों और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। विवेक का प्रयोग न्यायिक आधार पर किया जाना चाहिए न कि यंत्रवत्।

21. तदनुसार, हम, धारा 31 सीआर.पी.सी. को ध्यान में रखते हुए संदर्भ का उत्तर देते हैं। एक मुकदमे में दो या दो से अधिक अपराधों के लिए सज़ा को एक साथ चलाने का आदेश देने का पूरा विवेक न्यायालय पर छोड़ दिया गया है, जो अपराधों की प्रकृति और सहायक परिस्थितियों को बढ़ाने या कम करने को ध्यान में रखता है। **हमें यह मानने का कोई कारण नहीं मिलता है कि सामान्य नियम सजा को लगातार बनाने का आदेश देना है और अपवाद सजाओं को समवर्ती बनाना है।** निःसंदेह, यदि न्यायालय सजा को समवर्ती करने का आदेश नहीं देता है, तो एक सजा दूसरे के बाद चल सकती है, ऐसे क्रम में जैसा न्यायालय निर्देश दे। हमें मोहम्मद अख्तर हुसैन के पहले के फैसले एवं धारा 31 सी.आर.पी.सी.में भी कोई विरोधाभास नहीं दिखता।

XXX XXX

23. XXX XXX. लेकिन वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हमारे विचार में, अपीलकर्ता पर लगाई गई सजाओं को एक साथ चलाने का आदेश दिया जा सकता है। शादी के समय, अपीलकर्ता दिल्ली में एक पेंटर के रूप में कार्यरत थी और शादी के बाद, यह कहा गया है कि अपीलकर्ता ने खाड़ी देशों में रोजगार हासिल कर लिया था और दो साल में केवल एक बार भारत आती थी। यह साक्ष्य के आधार पर लाया गया है कि 1988-1996 तक आठ वर्षों की अवधि में, वह केवल चार बार छुट्टी पर भारत आए और अंततः जनवरी फरवरी 1996 के दौरान छुट्टी पर रहते हुए उन्होंने भारत का दौरा किया। अपीलकर्ता ने भी प्रयास किए प्रतीत होते हैं मतभेदों को सुलझाने के लिए मध्यस्थता के लिए और मध्यस्थता 23.2.1996 को होने वाली थी; लेकिन लिलीकुट्टी ने उसी दिन आत्महत्या कर ली। **मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, आईपीसी की धारा 498ए और 306 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अपीलकर्ता पर लगाई गई सजा को एक साथ चलाने का आदेश दिया जाता है और उपरोक्त संशोधनों के साथ अपील का निपटारा किया जाता है।"**

उपरोक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि यद्यपि उक्त मामले में दी गई सजा में आजीवन कारावास की सजा शामिल नहीं थी, फिर भी, मुद्दे का निर्धारण करते समय, पैरा 13 और 20 में, यह देखा गया कि यदि कोई सजा है आजीवन कारावास के मामले में, दोषी को पहले आजीवन कारावास की सजा भुगतने और उसके बाद निश्चित अवधि के लिए कारावास की बाकी सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं था और ऐसा कोई भी निर्देश अव्यवहारिक होगा और चूंकि, आजीवन कारावास की सजा का मतलब जेल है। दोषी के सामान्य जीवन के अंत तक, **निश्चित अवधि के लिए कारावास की सजा आवश्यक रूप से आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलनी चाहिए और ऐसे मामले में, यह उचित होगा, यदि सत्र न्यायाधीश निर्देश जारी करने में अपने विवेक का प्रयोग करें। सजाओं के समवर्ती चलने के लिए। इसी तरह, यदि दोषी को दो आजीवन कारावास की सजा दी जाती है, तो आवश्यक रूप से, अदालत को उन सजाओं को एक साथ चलाने का निर्देश देना होगा।** माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर माना है कि उक्त मामले में सजाएं एक साथ चलने का आदेश दिया जाना चाहिए और अपील का निपटारा उक्त संशोधन के साथ कर दिया गया।

(18) तीसरा निर्णय जो ध्यान देने योग्य होगा वह सुनील कुमार @ सुधीर कुमार के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय है जिसे याचिकाकर्ता के साथ-साथ प्रतिवादी नंबर 1 के वकील द्वारा उद्धृत करने की मांग की गई है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अंश यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं।

> ''XXX XXX
>
> 4. उपरोक्त के अनुसार दोषसिद्धि दर्ज करने के बाद, परीक्षण न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को निम्नलिखित तरीके से कई दंडों की सजा सुनाई: 5 साल की अवधि के लिए कठोर कारावास और 2,000/- रुपये का जुर्माना और डिफ़ॉल्ट पर धारा 363 आईपीसी के तहत अपराध के लिए 6 महीने का अतिरिक्त कारावास; 3,000/- रुपये के जुर्माने के साथ 7 साल की कठोर कारावास और डिफ़ॉल्ट रूप से आईपीसी की धारा 366 के तहत अपराध के लिए 1 वर्ष की अतिरिक्त कैद और 10 साल की कठोर कारावास और 5,000/- रुपये के जुर्माने के साथ। और डिफ़ॉल्ट पर, आईपीसी की धारा 376 (1) के तहत अपराध के लिए 1½ साल की अतिरिक्त कैद। हालाँकि, परीक्षण न्यायालय ने यह निर्दिष्ट नहीं किया कि कारावास की सज़ाएँ एक साथ चलेंगी या लगातार, और यदि उन्हें लगातार चलाने का इरादा है, तो निचली अदालत ने उस आदेश को निर्दिष्ट नहीं किया जिसमें एक सज़ा की समाप्ति के बाद कारावास शुरू होना था।

XXX XXX

7.1. विद्वान वकील ने नागराज राव बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो: (2015) 4 एस सी सी 302 और गगन कुमार बनाम पंजाब राज्य: (2019) 5 एस सी सी 154 के फैसलों पर भरोसा करते हुए तर्क दिया है कि यह अदालत द्वारा फैसला सुनाने के लिए अनिवार्य है। यह निर्दिष्ट करने के लिए दंड कि क्या वे समवर्ती या लगातार चलेंगे; और अपेक्षित विशिष्टताओं को बताने के लिए निचली अदालत और उच्च न्यायालय की ओर से की गई चूक को आरोपी-अपीलकर्ताओं के हितों के लिए हानिकारक काम करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि हालांकि सीआरपीसी की धारा 31 के आदेश के अनुसार, जब तक कि सजाएं एक साथ चलने के लिए निर्दिष्ट नहीं की जाती हैं, तब तक सजाएं लगातार चलती रहती हैं, लेकिन, **उस उद्देश्य के लिए, अदालत को उस आदेश को निर्देशित करने की आवश्यकता होती है जिसमें वे चलेंगे; और** परीक्षण न्यायालय **या उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि अदालतें जानबूझकर लगातार सजाएं चलाने का प्रावधान कर रही थीं। इसके अलावा, ओ.एम. में निर्णय के संदर्भ में। चेरियन उर्फ थंकाचन बनाम केरल राज्य और अन्य: (2015) 2 एससीसी 501,** विद्वान वकील आग्रह करेंगे कि यह सामान्य नियम नहीं है कि कई सजाओं को लगातार चलाया जाए।

XXX XXX

10.2. इस प्रकार, यह किसी भी संदेह से परे है कि सीआरपीसी की धारा 31 (1) न्यायालय को अपराधों की प्रकृति और आसपास के कारकों को ध्यान में रखते हुए एक मुकदमे में दो या दो से अधिक अपराधों के लिए सजा को एक साथ चलाने का आदेश देने का पूर्ण विवेक प्रदान करती है। हालाँकि यह नहीं कहा जा सकता कि लगातार चलना सामान्य नियम है, लेकिन यह भी निर्धारित नहीं है कि कई सज़ा एक साथ चलने चाहिए। न्यायालय द्वारा इस तरह के विवेक के प्रयोग के मामले में कोई भी सख्त रुख नहीं अपनाया जा सकता है; लेकिन इस विवेक का प्रयोग अपराध की प्रकृति और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के संदर्भ में विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए। हालाँकि, यदि सजा **(आजीवन कारावास के अलावा)** को एक साथ चलाने का प्रावधान नहीं है, तो एक के बाद एक सजाएँ, **ऐसे क्रम में चलेंगी जैसा न्यायालय निर्देश दे।**

11. सीआरपीसी की धारा 31 (1) में जो प्रावधान किया गया है, उसे इस न्यायालय की व्याख्याओं के साथ पढ़ें, तो यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रथम दृष्टया न्यायालय कई सजाएं देते समय कानूनी दायित्व के तहत है कि वह स्पष्ट शब्दों में निर्दिष्ट करे कि क्या वे एक साथ चलेंगे या लगातार।

XXX XXX

12. जैसा कि देखा गया है, यदि प्रथम दृष्टया न्यायालय सजाओं के समवर्ती चलने को निर्दिष्ट नहीं करता है, तो प्राथमिक रूप से निष्कर्ष यह है कि न्यायालय का इरादा ऐसी सजाओं को लगातार चलाने का है, हालांकि, जैसा कि पूर्वोक्त कहा गया है, प्रथम दृष्टया न्यायालय को सजाएं नहीं छोड़नी चाहिए यह मामला बाद के चरण में कटौती के लिए है। **इसके अलावा, यदि प्रथम दृष्टया न्यायालय सज़ाओं को लगातार चलाने का इरादा रखता है, तो उस पर उस आदेश (यानी, अनुक्रम) को बताने का एक और दायित्व है** जिसमें उन्हें निष्पादित किया जाना है। इस मामले में परेशान करने वाली बात यह है कि न केवल परीक्षण न्यायालय ने अपेक्षित विशिष्टताओं को बताने में चूक की, यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी परीक्षण न्यायालय के आदेश में ऐसी खामियों को नजरअंदाज कर दिया।"

उपरोक्त मामले के तथ्यों से पता चलता है कि इसमें आजीवन कारावास की कोई सजा नहीं थी। उक्त निर्णय में, **नागराज राव बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो और गगन कुमार बनाम पंजाब राज्य** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पहले के निर्णयों पर भरोसा किया गया था कि यह देखना न्यायालय के लिए अनिवार्य था। यह निर्दिष्ट करने के लिए दंड कि क्या वे समवर्ती या लगातार चलेंगे और परीक्षण न्यायालय और उच्च न्यायालय की ओर से आवश्यक विशिष्टताओं को बताने की चूक को इस तरह से संचालित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है जो अभियुक्त-अपीलकर्ताओं के हितों के लिए हानिकारक हो। . **निर्णय के पैरा 10.2 में यह विशेष रूप से देखा गया था कि यदि सजा (आजीवन कारावास के अलावा) को एक साथ चलाने का प्रावधान नहीं है, तो एक के बाद एक सजाएं, ऐसे क्रम में चलेंगी जैसा न्यायालय निर्देश दे।** यह भी देखा गया कि प्रथम दृष्टया न्यायालय एक मुकदमे में कई सजा सुनाते समय स्पष्ट शब्दों में निर्दिष्ट करने के लिए कानूनी दायित्व के तहत है कि क्या वे समवर्ती या लगातार चलेंगे और यह देखा कि यदि प्रथम दृष्टया न्यायालय लगातार सजाओं को चलाने का इरादा कर रहा था,

---

[4] (2015) 4 एससीसी 302

[5] (2019) 5 एससीसी 154

उस पर एक और दायित्व है कि वह आदेश बताए। अनुक्रम, जिसमें उन्हें निष्पादित किया जाना है। इस स्तर पर, यह नोट करना प्रासंगिक होगा कि प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वकील ने यह बताने के लिए उक्त निर्णय के कुछ पैराग्राफों पर भरोसा करने की मांग की है कि कानून के मामले में, दोषसिद्धि का निर्णय मौन है और निर्देशित करें कि सजाएं एक साथ चलने हैं, फिर वही लगातार चलने हैं। हालाँकि, उक्त अवलोकन के संदर्भ को इस तथ्य के साथ पढ़ा जाना चाहिए कि उक्त अवलोकन ऐसी स्थिति में किए गए थे जहां दी गई सजाएं आजीवन कारावास की सजा के अलावा थीं, जैसा कि फैसले के पैरा 10 से स्पष्ट है।

(19) चौथा निर्णय जो वर्तमान मामले में निर्णय के लिए प्रासंगिक है, वह **विकास यादव** के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अंश यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं। -

> "अपील के इस बैच में अपीलकर्ताओं को भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 34 के साथ पठित धारा 302, 364, 201 के तहत अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया है। इस न्यायालय ने 17.08.2015 को विशेष अनुमति याचिकाओं पर सुनवाई करते हुए निम्नलिखित आदेश पारित किया था-
>
> "विलंब क्षमा किया गया।
>
> याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील को विस्तार से सुनने के बाद, हमारा विचार है कि जहां तक याचिकाकर्ताओं की दोषसिद्धि का संबंध है, विवादित आदेश किसी भी हस्तक्षेप की मांग नहीं करते हैं। तदनुसार, तीन याचिकाकर्ताओं की दोषसिद्धि, जैसा कि नीचे की अदालतों द्वारा दर्ज किया गया है, बरकरार रखी जाती है।
>
> **सज़ा की अवधि पर नोटिस जारी करें, जो छह सप्ताह के बाद वापस किया जाएगा।"**
>
> 2. दिनांक 16.06.2015 को अवकाश स्वीकृत किया गया। इस प्रकार, हम केवल कानूनी बचाव और सज़ा लगाने की औचित्यता से चिंतित हैं।
>
> 3. इन अपीलों में बहस कानून के मुद्दों पर शुरू हुई। श्री यू.आर. 2015 की आपराधिक अपील संख्या 1531-1533 में अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ललित और श्री शेखर नफड़े और 2015 की आपराधिक अपील संख्या 1528-1530 में अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री अतुल नंदा ने सजा का औचित्य पर सवाल उठाया कि **उच्च**

न्यायालय ने एक निश्चित अवधि की सजा दी है, यानी धारा 302 आईपीसी के तहत अपराध के लिए 25 साल और धारा 201 आईपीसी के तहत अपराध के लिए 5 साल, इस शर्त के साथ कि दोनों सजाएं लगातार चलेंगी। यहां यह नोट करना उचित है कि अन्य अपराधों के संबंध में अलग-अलग सजाएं लगाई गई हैं लेकिन उन्हें समवर्ती होने का निर्देश दिया गया है। निश्चित अवधि/काल की सजा देने पर उच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित तर्कों को आगे बढ़ाने के बाद, विशेष रूप से जब परीक्षण न्यायालय ने मौत की सजा नहीं दी है, विद्वान वकील ने तर्क दिया कि तत्काल मामले में तथ्यात्मक स्कोर इस तरह के कठोर परिसीमन की आवश्यकता नहीं थी जिसके परिणामस्वरूप अनुपातहीन सज़ाएं दी गई हैं।

XXX XXX

76. अगला निवेदन धारा 201 के तहत दी गई सजा को लगातार चलाने के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश से संबंधित है। अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने वी. श्रीहरन (सुप्रा) मामले में संविधान पीठ के फैसले की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। बड़ी पीठ निम्नलिखित प्रश्न पर विचार कर रही थी।-

"क्या किसी दोषी को कई हत्याओं का दोषी पाए जाने पर लगातार आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है, जिसके लिए उस पर एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया गया है?"

77. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने इस विश्लेषण पर ध्यान आकर्षित किया है कि क्या किसी व्यक्ति को "सावधि सजा" के साथ आजीवन कारावास की सजा सुनाई जानी चाहिए या उसे लगातार या समवर्ती रूप से भुगतना चाहिए। उस संदर्भ में बड़ी पीठ ने इस प्रकार कहा है:-

"हालाँकि, हम ऐसा नहीं सोचते हैं। सीआरपीसी की धारा 31 में प्रयुक्त भाषा को देखते हुए अदालत की यह निर्देश देने की शक्ति कि सज़ा किस क्रम में चलेगी, निर्विवाद है। अदालत, इसलिए, वैध रूप से यह निर्देश दे सकती है कि सज़ा किस क्रम में चलेगी कैदी को अपनी उम्रकैद की सजा शुरू होने से पहले पहले अवधि की सजा काटनी होगी। ऐसा निर्देश पूरी तरह से वैध होगा और धारा 31 के अनुरूप होगा। हालांकि, इसका उलटा सच नहीं हो सकता है, अगर अदालत उम्रकैद की सजा पहले शुरू करने का निर्देश देती है तो अनिवार्य रूप से इसका

तात्पर्य यह है कि सजा शब्द समवर्ती रूप से चलेगा। **ऐसा इसलिए है क्योंकि एक बार जब कैदी अपना जीवन जेल में बिता लेता है, तो उसे आगे की सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं होता है।"**

78. मौजूदा मामले में, परीक्षण न्यायालय ने आजीवन कारावास की सजा दी है और सभी सजाओं को एक साथ रखने का निर्देश दिया है। उच्च न्यायालय ने सज़ा को आजीवन कारावास से बढ़ाकर मृत्युदंड तक करने से इनकार कर दिया है, लेकिन एक निश्चित अवधि की सज़ा लगाई है। यह धारा 433-ए के तहत परिकल्पित चौदह वर्षों के बाद छूट की शक्ति को कम कर देता है। **ऐसी स्थिति में हमारा मानना है कि उपरोक्त संविधान पीठ द्वारा बताया गया सिद्धांत चारों पर लागू होगा। उच्च न्यायालय ने यह निर्देश नहीं दिया है कि आईपीसी की धारा 201/34 के तहत सजा पहले चलेगी और उसके बाद, निश्चित अवधि की सजा शुरू होगी। राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री दयान कृष्णन ने तर्क दिया है कि इस न्यायालय को सजा को संशोधित करना चाहिए और निर्देश देना चाहिए कि अपीलकर्ताओं को आईपीसी की धारा 201/34 के तहत दंडनीय अपराध के लिए कठोर कारावास भुगतना होगा और उसके बाद, निश्चित अवधि की सजा भुगतनी होगी। सूचक के विद्वान वकील द्वारा लिखित प्रस्तुतिकरण में भी इसी तरह का तर्क दिया गया है। चूंकि उच्च न्यायालय ने ऐसा नहीं किया है, इसलिए हमें नहीं लगता कि अपीलकर्ताओं द्वारा दायर अपील में इस न्यायालय की ओर से ऐसा करना उचित होगा। इसलिए, इस संबंध में हम अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील की दलील को स्वीकार करते हैं और निर्देश देते हैं कि आईपीसी की धारा 201/34 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दी गई सजा उच्च न्यायालय द्वारा अन्य अपराधों के लिए लगाई गई सजा के साथ-साथ चलेगी।"**

उपरोक्त फैसले के अवलोकन से पता चलता है कि आईपीसी की धारा 302 के तहत अपराध के लिए 25 साल की सजा और आईपीसी की धारा 201 के तहत अपराध के लिए 5 साल की सजा उच्च न्यायालय ने इस शर्त के साथ दी थी कि दोनों सजाएं चलेंगी। अन्य अपराधों के संबंध में लगातार अन्य अलग-अलग सजाएं भी लगाई गई थीं लेकिन उन्हें एक साथ चलाने का निर्देश दिया गया था। एसएलपी में सजा की मात्रा के संबंध में नोटिस जारी किया गया था और दोषसिद्धि को बरकरार रखा गया था। फैसले के पैरा 78 में, यह देखने के बाद कि संवैधानिक पीठ के फैसले में कहा गया सिद्धांत लागू होगा, यह माना गया कि चूंकि उच्च न्यायालय ने यह निर्देश नहीं दिया था कि आईपीसी की धारा 201, 34 के तहत सजा पहले चलेगी, और उसके बाद 25 साल की सजा शुरू होगी, इस प्रकार, राज्य की ओर से पेश वरिष्ठ

वकील की दलीलें इस आशय के लिए उक्त निर्देश में संशोधन की मांग कर रही थीं। आईपीसी की धारा 201/34 के तहत अपराध के लिए 5 साल के कठोर कारावास की सजा को पहले आरोपी द्वारा भुगतना पड़ा, जिसे खारिज कर दिया गया और वास्तव में, अपीलकर्ता का तर्क इस आशय का था कि धारा 201/ के तहत दंडनीय अपराध के लिए लगाई गई सजा आईपीसी की धारा 34 को उच्च न्यायालय द्वारा अन्य अपराधों के लिए दी गई सजा के साथ-साथ चलाने का आदेश दिया गया। उपरोक्त निर्णय से यह पता चलता है कि जहां परीक्षण न्यायालय द्वारा इस आशय का कोई विशेष निर्देश नहीं था कि आजीवन कारावास की सजा से पहले की अवधि की सजा चलेगी, वहां माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अगली अवधि की सजा को लागू करना उचित समझा। सजाओं को पहले चलाने के बजाय समवर्ती रूप से चलाएँ। उक्त मामले के तथ्य वर्तमान मामले के निर्णय के लिए प्रासंगिक होंगे, हालांकि, यह न्यायालय इस तथ्य के प्रति आश्वस्त है कि उक्त आदेश मुख्य निर्णय से उत्पन्न अपील में पारित किया गया था, न कि संपार्श्विक कार्यवाही में।

(20) पांचवां निर्णय जो प्रासंगिक है वह **हरविंदर सिंह @ पिंडर और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य** नामक मामले में इस न्यायालय की डिवीजन बेंच का निर्णय होगा। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अंश यहां नीचे प्रस्तुत किए गए हैं: -

> "हम दोषसिद्धि के फैसले दिनांक 09.09.2015 और अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, लुधियाना द्वारा पारित सजा के आदेश दिनांक 11.09.2015 से उत्पन्न पांच अपीलों से निपट रहे हैं। सीआरए-डी-1501 डीबी-2015, सीआरए-डी -1605 डीबी-2015, सीआरए-एस-4385-एसबी 2015 और सीआरए-एस-4599-एसबी 2015 को एफआईआर संख्या 8 दिनांक 02.02.2012 में धारा 302, 379, 465, 468, 471, 474, 201,120-बी/34 के तहत अपीलकर्ता को दोषी ठहराया गया और सजा सुनाई गई। भारतीय दंड संहिता (संक्षिप्त आईपीसी के लिए) पुलिस स्टेशन हैबोवाल, लुधियाना में निम्नानुसार पंजीकृत है:

क्रम संख्या	दोषी का नाम	धारा	सजा और जुर्माना	जुर्माने की चूक के मामले में
1.	हरविंदर सिंह	आईपीसी की धारा 302 के साथ पठित धारा 120 –बी पीड़ित बलराज सिंह गिल की हत्या के लिए	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान बलराज सिंह गिल के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	एक साल और

		आईपीसी की धारा 302 के साथ पठित धारा 120 –बी पीड़ित मोनिका कपिला की हत्या के लिए	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान मोनिका कपिला के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	अगले साल
		आईपीसी की धारा 404 के साथ पठित धारा 120 –बी आईपीसी	3 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		धारा 465 आईपीसी के साथ पठित धारा 120-बी आईपीसी	2 साल	
		धारा 468 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	5 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		धारा 471 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	2 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		201 आर/डब्ल्यू 120बी आईपीसी	7 साल और 20,000/- रुपये जुर्माना	अगले 6 महीने
2.	प्रितपाल सिंह	पीड़ित बलराज सिंह गिल की हत्या के लिए आईपीसी की धारा 302, के साथ पठित धारा 120 बी आईपीसी	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान बलराज सिंह गिल के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	अगले साल
		आईपीसी की धारा 302 के साथ पठित धारा 120 –बी पीड़ित मोनिका कपिला की हत्या के लिए	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान मोनिका कपिला के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	अगले 1 साल

		आईपीसी की धारा 404 के साथ पठित धारा 120 –बी आईपीसी	3 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		धारा 465 आईपीसी के साथ पठित धारा 120-बी आईपीसी	2 साल	
		धारा 468 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	5 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		धारा 471 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	2 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने
		201 साथ पठित धारा 120 बी आईपीसी	7 साल और 20,000/- रुपये जुर्माना	अगले 6 महीने
3.	उमेश कारड़ा	पीड़ित बलराज सिंह गिल की हत्या के लिए आईपीसी की धारा 302 को धारा के साथ पठित धारा 120 बी आईपीसी	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान बलराज सिंह गिल के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	अगले 1 साल
		मोनिका कपिला की हत्या के लिए धारा 302 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	आजीवन कारावास और जुर्माना 1,00,000/- रुपये जिसमें से Rs.80,000/- का भुगतान मोनिका कपिला के परिवार को मुआवजे के रूप में किया जाएगा।	अगले 1 साल

		आईपीसी की धारा 404 के साथ पठित धारा 120 –बी आईपीसी	3 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने	
		धारा 465 आईपीसी के साथ पठित धारा 120-बी आईपीसी	2 साल		
		धारा 468 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	5 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने	
		धारा 471 आईपीसी के साथ पठित धारा 120बी आईपीसी	2 साल और 10,000/- रुपये जुर्माना	अगले 3 महीने	
		201 के साथ पठित 120बी आईपीसी	7 साल और 20,000/- रुपये जुर्माना	अगले 6 महीने	

2. उपरोक्त तीन दोषियों हरविंदर सिंह, प्रीतपाल सिंह और उमेश कारदा की सजा प्रत्येक अपराध के लिए लगातार चलाने का आदेश दिया गया है।

XXX XXX

67. **विद्वान** परीक्षण न्यायालय **इस तथ्य से प्रभावित हो गया कि इस मामले में दो हत्याएं की गई थीं, और इस प्रकार उक्त दो हत्याओं के लिए दो आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। हालाँकि, विद्वान** परीक्षण न्यायालय **ने इस तथ्य को नज़रअंदाज़ कर दिया कि उक्त हत्याएँ एक ही घटना में की गई थीं और दोनों मामलों में अपराध एक ही है यानी धारा 302 आईपीसी और कोई अलग-अलग एफआईआर नहीं हैं।** फिर भी, आईपीसी की धारा 302 के तहत अपराध को छोड़कर, कोई अन्य अपराध नहीं है, जिसमें मौत की सजा या आजीवन कारावास की सजा हो, इस प्रकार, शंकर किसनराव खाड़े (सुप्रा) मामले में निर्णय अलग है और वर्तमान मामले में लागू नहीं होता है। शंकर किसनराव खाड़े (सुप्रा) में लागू "**दुर्लभ** मामले" का परीक्षण, इस मामले में लागू नहीं होगा क्योंकि इसमें कृत्यों की कोई श्रृंखला नहीं है (एक से अधिक अपराध जिसमें मौत की सजा या आजीवन कारावास शामिल है), जो उचित ठहराया जा सके। लगातार चल रही सज़ाओं का अधिरोपण है।

68. इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि अपीलकर्ताओं हरविंदर सिंह, प्रीतपाल सिंह और उमेश कारड़ा को आजीवन कारावास की सजा दी जाए जो दोनों सजाएं एक साथ चलेंगी ।

69. इस प्रश्न पर आते हैं कि क्या विकास यादव बनाम में उक्त आरोपी अपीलकर्ताओं पर अन्य अपराधों के लिए दी गई सजाएं एक साथ या लगातार चलेंगी। यूपी राज्य और अन्य, (2016)9 एससीसी 541, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने शंकर किशनराव खाड़े (सुप्रा) में दिए गए फैसले पर विचार किया। हालाँकि, भारत संघ बनाम श्रीहरन उर्फ मुरुगन और अन्य में संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए। (2014) 1 एससीसी पेज 1, इसे इस प्रकार रखा गया था-

"76. अगला निवेदन उच्च न्यायालय द्वारा धारा 201 के तहत लगातार चलने वाली सजा के संबंध में दिए गए निर्देश से संबंधित है। अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने हमारा ध्यान 56 सीआरए-डी-1501-डीबी-2015 के संविधान 53 की ओर आकर्षित किया है। और अन्य जुड़े मामले वी. श्रीहरन (सुप्रा) में 54 बेंच का फैसला। बड़ी बेंच निम्नलिखित प्रश्न पर विचार कर रही थी-

"क्या किसी दोषी को कई हत्याओं का दोषी पाए जाने पर लगातार आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है, जिसके लिए उस पर एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया गया है?"

77. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने इस विश्लेषण पर ध्यान आकर्षित किया है कि क्या किसी व्यक्ति को "सावधि सजा" के साथ आजीवन कारावास की सजा सुनाई जानी चाहिए या उसे लगातार या समवर्ती रूप से भुगतना चाहिए। उस संदर्भ में बड़ी पीठ ने इस प्रकार कहा है:-

"हालाँकि, हम ऐसा नहीं सोचते हैं। सीआरपीसी की धारा 31 में प्रयुक्त भाषा को देखते हुए अदालत की यह निर्देश देने की शक्ति कि सज़ा किस क्रम में चलेगी, निर्विवाद है। अदालत, इसलिए, वैध रूप से यह निर्देश दे सकती है कि सज़ा किस क्रम में चलेगी कैदी को अपनी उम्रकैद की सजा शुरू होने से पहले पहले अवधि की सजा काटनी होगी। ऐसा निर्देश पूरी तरह से वैध होगा और धारा 31 के अनुरूप होगा। हालांकि, इसका उलटा सच नहीं हो सकता है, अगर अदालत उम्रकैद की सजा पहले शुरू करने का निर्देश देती है तो यह जरूरी होगा इसका तात्पर्य यह है कि सजा की अवधि साथ-साथ चलेगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक बार जब कैदी अपना जीवन जेल में बिता लेता है, तो उसे आगे की सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं होता है।"

XXX XXX

70. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि यदि दो सज़ा, जिनमें से एक आजीवन कारावास और दूसरा सावधि सज़ा है, न्यायालय द्वारा लगाए जाते हैं, तो जब तक सावधि सज़ा पहले शुरू करने का आदेश नहीं दिया जाता है, तब तक दोनों सजाएं एक साथ चलेंगी। इस प्रकार, यह माना गया कि न्यायालय वैध रूप से यह निर्देश दे सकता है कि कैदी को अपनी आजीवन कारावास की सजा शुरू होने से पहले सजा काटनी होगी। जब तक ऐसा निर्देशित न किया जाए, प्रथम दृष्टया आजीवन कारावास की सजा के साथ सभी सजाएं एक साथ चलेंगी, तर्क यह है कि एक बार जब कैदी अपना जीवन जेल में बिता लेता है, तो उसके आगे की सजा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं है।"

उपरोक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि उक्त मामले में, छह आरोपियों में से तीन को आईपीसी की धारा 302 के दो मामलों में आजीवन कारावास की सजा दी गई थी और इसके अलावा, विभिन्न अन्य धाराओं के तहत अवधि की सजा लगातार चलाने के लिए भी आदेश दिया गया था। उपर्युक्त निर्णय के पैरा 67 में यह देखा गया कि वर्तमान मामला दो हत्याओं का मामला था, जिनके बारे में कहा गया था कि पैरा 70 में एक ही घटना को अंजाम दिया गया था। यह देखा गया कि मामले में, दो सजाएं हैं, उनमें से एक है आजीवन कारावास और दूसरा एक अवधि की सजा है, तो, जब तक कि अवधि की सजा को शुरू करने का आदेश नहीं दिया जाता है, दोनों सजाओं को एक साथ चलाने की आवश्यकता होती है और यह आगे देखा गया कि हालांकि अदालत वैध रूप से दोषी को पहले की अवधि की सजा भुगतने का निर्देश दे सकती है। आजीवन कारावास की सजा की शुरुआत और यदि ऐसा निर्देशित नहीं है, तो आजीवन कारावास पहले चलेगा और अन्य सभी सजाएं आवश्यक रूप से साथ-साथ चलेंगी और इसका कारण यह बताया गया था कि एक बार कैदी ने जेल में अपना जीवन बिताया है , उसे आगे सज़ा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं है। उक्त टिप्पणी वर्तमान मामले के निर्णय के लिए भी प्रासंगिक है, हालांकि यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि उक्त निर्णय के खिलाफ अपील की विशेष अनुमति दायर की गई है और उसी में नोटिस जारी किया गया है और उसे लंबित बताया गया है लेकिन यह तथ्य कि उक्त निर्णय पर कोई रोक नहीं है, दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित वकील द्वारा स्वीकार किया गया है

(21) उपरोक्त प्रावधानों के साथ-साथ ऊपर उल्लिखित निर्णयों से, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आएंगे -

1) **जहां एक मुकदमे में, एक व्यक्ति को दो या दो से अधिक अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है, और आजीवन कारावास की सजा में शामिल नहीं है**

और दोषसिद्धि के फैसले और सजा के आदेश में यह निर्दिष्ट नहीं किया गया है कि सजाएं एक साथ चलेंगी, तो ऐसी स्थिति में सजाएं लगातार चलेंगी। (इस संबंध में **सुनील कुमार के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पैरा 10.2 की अंतिम पंक्तियों का संदर्भ दिया जा सकता है, जो यहां ऊपर दिया गया है और साथ ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले के पैरा 17 का भी हवाला दिया जा सकता है। मुथुरामलिंगम और अन्य (सुप्रा) के मामले में न्यायालय, जिसे यहां ऊपर भी पुन: प्रस्तुत किया गया है)।**

II) जहां एक मुकदमे में, आजीवन कारावास की कई सजाएं दी जाती हैं, वहां दी गई आजीवन कारावास की सजाओं को लगातार चलाने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है और आवश्यक रूप से साथ-साथ चलना होगा, क्योंकि आजीवन कारावास का मतलब किसी के जीवन की पूरी अवधि होगी। हालाँकि, ऐसी सजाओं को एक-दूसरे के ऊपर आरोपित किया जाएगा ताकि एक मामले में सक्षम प्राधिकारी द्वारा दी गई किसी भी छूट या लघूकरण के परिणामस्वरूप दूसरे मामले में कैदी को दी गई सजा में छूट न हो। (उसी के संबंध में मुथुरामलिंगम और अन्य के मामले (सुप्रा) में पारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पैरा 31 का संदर्भ दिया जा सकता है, जैसा कि यहां ऊपर दिया गया है)।

III) जहां एक मुकदमे में, आरोपी को कई अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है और उसे एक अपराध के लिए आजीवन कारावास और अन्य अपराधों के लिए अवधि की सजा दी जाती है, तो परीक्षण न्यायालय के पास दोषी को पहले अवधि की सजा भुगतने का निर्देश देने का अधिकार होगा। उसकी आजीवन कारावास की सजा की शुरुआत और ऐसा निर्देश वैध होगा। हालाँकि, ऐसा कोई भी निर्देश परीक्षण न्यायालय द्वारा उस विशेष मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद पारित किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में प्रयोग किया जाने वाला विवेक न्यायिक आधार पर होना चाहिए और इसे यंत्रवत् नहीं किया जाना चाहिए। हालाँकि, इसका उलटा न्यायिक जांच में खड़ा नहीं होगा, क्योंकि परीक्षण **न्यायालय यह निर्देश देता है कि आजीवन कारावास**

पहले शुरू होगा।, और उसके बाद सज़ा की अवधि शुरू होगी, फिर इसका मतलब यह होगा कि सज़ा की अवधि साथ-साथ चलेगी, क्योंकि एक बार जब कैदी अपना जीवन जेल में बिता लेता है, तो उसे आगे की सज़ा भुगतने का कोई सवाल ही नहीं है। (इस संबंध में मुथुरामलिंगम और अन्य मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के पैरा 32 का संदर्भ लिया जा सकता है)।

IV) जब कोई व्यक्ति पहले से ही सावधि कारावास की सजा काट रहा है, उसे बाद में दोषी ठहराए जाने पर एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो ऐसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास की सजा उस अवधि की समाप्ति पर शुरू होगी जिसके लिए उसे कारावास दिया गया है। पहले सजा सुनाई गई हो, जब तक कि अदालत यह निर्देश न दे कि अगली सजा ऐसी पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी। (इस संबंध में ऊपर दिए गए सीआरपीसी की धारा 427(1) के प्रावधानों का संदर्भ लिया जा सकता है)।

V) जब कोई व्यक्ति पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा है, उसे बाद में दोषी पाए जाने पर एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो बाद की सजा ऐसी पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी। (इस संबंध में सीआरपीसी की धारा 427(2) का संदर्भ यहां ऊपर दिया गया है)।

उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, यह न्यायालय यह निर्धारित करना चाहेगा कि विवादित आदेश कानूनी रूप से उचित है या नहीं।

(22) वर्तमान मामले ने एक बहुत ही अजीब स्थिति पैदा कर दी है जो मामले के तथ्यों से स्पष्ट होगी जैसा कि इसके बाद संक्षेप में बताया जा रहा है

(23) याचिकाकर्ता को आईपीसी की धारा 302 के तहत और 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत दिनांक 23.11.2006 के फैसले के तहत दोषी ठहराया गया था। सजा के आदेश से, जिसे यहां पुन: प्रस्तुत किया गया है, यह स्पष्ट है कि पहली सजा थी आईपीसी की धारा 302 के तहत अपराध करने के लिए आजीवन कारावास और दूसरी 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत 5 साल की कठोर सजा थी

और तीसरी सजा 5 साल के कठोर कारावास की थी, वह भी 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत। दोषसिद्धि के उक्त निर्णय और सजा के आदेश में, यह नहीं कहा गया था कि इन्हें समवर्ती रूप से चलाया जाना था, न ही यह कहा गया था कि सजा की अवधि आजीवन कारावास की सजा से पहले चलनी थी। सजा के उक्त आदेश में, यह देखा गया था कि यद्यपि, उक्त दुर्भाग्यपूर्ण घटना के कारण, तीन व्यक्तियों की मृत्यु हो गई थी, लेकिन याचिकाकर्ता का मृतक को मारने का कोई मकसद नहीं था, न ही इस तरह के अपराध को करने की कोई योजना थी और यह भी एक था। यह आकस्मिक घटना है क्योंकि परिस्थितियाँ घटना स्थल पर ही विकसित हुईं और इसके अलावा यह मृतक ही था जिसने स्वयं याचिकाकर्ता के परिसर की यात्रा की थी। दोषसिद्धि वारंट दिनांक 29.11.2006 (अनुलग्नक पी-4) अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ द्वारा उसी तारीख को जारी किया गया था जब सजा का आदेश पारित किया गया था और उसी पीठासीन अधिकारी द्वारा जिसने दोषसिद्धि का निर्णय और सजा का आदेश पारित किया था। और उक्त दोषसिद्धि वारंट में, यह विशेष रूप से कहा गया था कि सभी मूल सजाएं एक साथ चलनी थीं। यह दोनों पक्षों के बीच स्वीकृत मामला है कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के आधार पर (अनुलग्नक पी-5), उच्च न्यायालय के दिनांक 20.04.2011 के फैसले (अनुलग्नक पी-6) में याचिकाकर्ता की अपील को खारिज कर दिया गया। माननीय उच्चतम न्यायालय दिनांक 10.08.2011 (अनुलग्नक पी. 7) के समक्ष अपील के आधार, साथ ही माननीय उच्चतम न्यायालय के दिनांक 20.01.2016 के निर्णय (अनुलग्नक पी-8) में आपराधिक अपील को खारिज कर दिया गया। याचिकाकर्ता की ओर से यह बताने के लिए कोई आधार या तर्क नहीं उठाया गया कि परीक्षण न्यायालय को सजा को एक साथ चलाने का आदेश देना चाहिए था, क्योंकि याचिकाकर्ता के मामले के अनुसार, वह निश्चित था कि उसे जीवन पूरा करने के बाद रिहा किया जाना था। सज़ा क्योंकि दो अवधि की सज़ाएं आजीवन कारावास की सज़ा के साथ-साथ चलनी थीं। 13 साल की अवधि के बाद, प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा सीआरपीसी की धारा 362 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 353 के तहत आवेदन दिनांक 29.11.2019 (अनुलग्नक पी-9) दायर किया गया था। याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित सजा का पालन करने और उक्त दोषसिद्धि वारंट पर कार्रवाई न करने के लिए प्रतिवादी संख्या 1 से 3 (यहां प्रतिवादी संख्या 2 से 4) को निर्देश जारी करने के लिए। उक्त आवेदन में इस आशय के आरोप लगाए गए थे कि दोषसिद्धि वारंट जाली और मनगढ़ंत था। प्रतिवादी क्रमांक 1 से 3 (यहाँ प्रतिवादी क्रमांक 2 से 4) द्वारा दायर उत्तर में अधीक्षक ले. मॉडल जेल, चंडीगढ़, जेल महानिदेशक, हरियाणा और कारागार एवं सुधार महानिरीक्षक प्रशासन, यू.टी. चंडीगढ़, **उक्त आवेदन की रख-रखाव के संबंध में विशेष आपत्तियां उठाई गईं।** और यह भी कहा गया कि दोषसिद्धि वारंट वास्तविक दस्तावेज था और

सक्षम क्षेत्राधिकार वाले माननीय न्यायालय द्वारा जारी किया गया दोषसिद्धि वारंट न्यायालय के रिकॉर्ड का हिस्सा था और इसलिए, जालसाजी के संबंध में प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा लगाए गए आरोप समान प्रभाव के लिए सख्ती से इनकार किया गया, वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा दायर जवाब था, जो उक्त कार्यवाही में प्रतिवादी नंबर 4 था। प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा सीआरपीसी की धारा 362 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 353 के तहत दायर आवेदन को अतिरिक्त सत्र द्वारा अनुमति दी गई थी। न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने **मुथुरामलिंगम** मामले (सुप्रा) और **औ.एम.चेरियन @ थंकाचन** के मामला (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर चर्चा या विचार किए बिना, दिनांक 07.10.2021 के आक्षेपित आदेश के तहत। औ.एम.चेरियन @ थंकाचन का मामला (सुप्रा), हालांकि उक्त दो निर्णयों का हवाला दिया गया था और दिनांक 07.10.2021 के आक्षेपित आदेश में विशेष रूप से ध्यान दिया गया था और इस बात पर विचार किए बिना कि ऐसा आवेदन विचारणीय था या नहीं। आक्षेपित आदेश में यह माना गया कि सजाएँ लगातार चलनी थीं और दोषसिद्धि वारंट जिसमें यह कहा गया था कि सजाएँ एक साथ चलनी थीं, पर विचार नहीं किया जाना था। आक्षेपित आदेश में, तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता पहले ही 18 साल, 8 महीने और 18 दिन की वास्तविक सजा काट चुका है और हिरासत प्रमाण पत्र दिनांक 10.11 2021 के अनुसार 25 साल, 2 महीने और 19 दिनों की छूट सहित कुल अवधि काट चुका है। और यह तथ्य भी कि उक्त आवेदन सजा के आदेश पारित होने और दोषसिद्धि वारंट जारी होने के 13 साल की अवधि के बाद दायर किया गया था, उस पर विधिवत विचार नहीं किया गया था।

(24) यह न्यायालय, सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, यह मानता है कि विवादित आदेश अवैध है और निम्नलिखित आधारों पर खारिज किए जाने योग्य है: -

I)आक्षेपित आदेश धारा 353 के साथ पठित 362 Cr.P.C के तहत दायर एक आवेदन में पारित किया गया है। उक्त आवेदन में प्रतिवादी नं. 1 से 3 तक, अर्थात अधीक्षक, मॉडल जेल, चंडीगढ़, जेल महानिदेशक, हरियाणा और जेल और सुखंडत्मक प्रशासन महानिरीक्षक, यू. टी. चंडीगढ़, वर्तमान याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित सजा का पालन करने और दोषसिद्धि वारंट पर कार्रवाई नहीं करने के लिए **मांग की**। ।प्रतिवादी सं.1 से 3 द्वारा उक्त आवेदन की रखरखाव क्षमता पर विशेष रूप से सवाल उठाया गया था। जैसा कि पैरा 3 में आक्षेपित आदेश देखा गया है।हालाँकि, इसके बारे में कोई निष्कर्ष नहीं

दिया गया है। धारा 353 का अवलोकन, जिसे यहां ऊपर पुन: प्रस्तुत किया गया है, और "निर्णय" शब्द से संबंधित है, साथ ही धारा 362, जिसे यहां भी पुन: प्रस्तुत किया गया है, और इस प्रस्ताव से संबंधित है कि न्यायालय अपने फैसले को बदल नहीं सकता है, न ही , किसी भी तरीके से, एक पक्ष को निर्देश प्राप्त करने के लिए परीक्षण न्यायालय में वापस जाने का अधिकार देता है, जैसा कि उक्त आवेदन में मांगा गया था। उक्त धाराओं में से किसी में भी दोषसिद्धि वारंट को रद्द करने या किसी आदेश का पालन करने के लिए अधिकारियों को निर्देश जारी करने की परिकल्पना नहीं की गई है। एक बार जब अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने दिनांक 23.11.2006 के फैसले और दिनांक 29.11.2006 को सजा के आदेश के तहत अंततः मामले का निपटारा कर दिया था, अपील और एसएलपी जिसके खिलाफ पहले ही फैसला सुनाया जा चुका था, वर्तमान आवेदन को आगे बढ़ाते हुए, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ के समक्ष सजा का आदेश पारित होने के 13 साल की अवधि के बाद, सीआरपीसी की धारा 353 आर/डब्ल्यू 362 के तहत, यह कायम रखने योग्य नहीं था। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश कार्यात्मक अधिकारी बन गए थे, और इस प्रकार उक्त आवेदन पर विचार नहीं कर सकते थे। भारत के माननीय सुप्रीम कोर्ट ने, **हरि सिंह मान बनाम हरभजन सिंह बाजवा** नामक मामले में, **2001 (1) एससीसी 169** के रूप में रिपोर्ट किया था। यह देखा गया था कि किसी मामले के निपटारे के आधिकारिक आदेश पर हस्ताक्षर होते ही न्यायालय कार्यकुशल हो जाता है। आक्षेपित आदेश में ऐसा कुछ भी नहीं देखा गया है या वर्तमान कार्यवाही में इस न्यायालय को यह साबित करने के लिए कुछ भी नहीं दिखाया गया है कि उक्त आवेदन कायम रखने योग्य है। हालाँकि, अकेले उक्त आधार पर, आक्षेपित आदेश रद्द किए जाने योग्य है, लेकिन फिर भी, यह न्यायालय आक्षेपित आदेश में अन्य अवैधताओं को बताना चाहेगा, जिसके कारण भी, आक्षेपित आदेश उचित नहीं है।

II)आक्षेपित आदेश इस तथ्य पर ध्यान देने में विफल है कि जेल वारंट दिनांक 29.11.2006 को अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ के हस्ताक्षर के तहत उसी तारीख को जारी किया गया था जब उसी पीठासीन अधिकारी द्वारा सजा का आदेश पारित किया गया था। उक्त दोषसिद्धि वारंट में, यह विशेष रूप से उल्लेख किया गया था कि सभी मूल सजाएं एक साथ चलेंगी।

उक्त दोषसिद्धि वारंट का प्रासंगिक भाग यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है

"सेवा मे,

अधीक्षक

जिला जेल, चंडीगढ़

जबकि दिनांक 10.8.2004 से 25.11.2006 तक मेरे समक्ष आयोजित सत्र परीक्षण में अभियुक्त सुरेश चंद पुत्र धूप सिंह उम्र 45 वर्ष, निवासी 20/152, प्रभु नगर सोनीपत (हरियाणा) ने उक्त xxxxx के कैलेंडर में दोषी ठहराया गया और नीचे दिए गए अनुसार कठोर कारावास की सजा सुनाई गई: -

धारा	कठोर कारावास	जुर्माना रु.	जुर्माने की चूक के मामले में कठोर कारावास
302 आईपीसी	जीवन के लिए	3 लाख	3 साल
1.9.2002 को 25 आर्म्स एक्ट की घटना	5 साल	5,000/-	1 साल
25 आर्म्स एक्ट इंक 7.9.2002	5 साल	5,000/-	1 साल

सभी मूल सजाएं एक साथ चलेंगी।

हिरासत की अवधि. 7.9.2002 से 29.11.2006 तक इस मामले की जांच और सुनवाई के दौरान दोषी को दी गई सजा की अवधि से (4) वर्ष, 2 महीने और 22 दिन) काटने का आदेश दिया गया है।

यह आपको उक्त अधीक्षक को इस वारंट के साथ उक्त जेल में उक्त आरोपी को अपनी हिरासत में लेने के लिए अधिकृत और अपेक्षित करने के लिए है और इस प्रकार उपरोक्त सजाओं को कानून के अनुसार निष्पादित करने के लिए है।

29 नवंबर 2006 को मेरे हस्ताक्षर और इस न्यायालय की मुहर से दिया गया

जुर्माना नहीं भरा

हस्ताक्षर

(बी के मेहता)

अतिरिक्त. सत्र
न्यायाधीश, चंडीगढ़"

सीआरपीसी की धारा 425 के अनुसार, जो सीआर.पी.सी. के अध्याय XXXII के अनुसार निहित है, सजा के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारंट या तो न्यायाधीश द्वारा या सजा सुनाने वाले मजिस्ट्रेट द्वारा, या उत्तराधिकारी द्वारा जारी किया जा सकता है। सीआर.पी.सी. की धारा 425 को यहाँ पुनः प्रस्तुत किया गया है।-

> **425. वारंट कौन जारी कर सकता है:**----किसी सजा के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारंट या तो उस न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किया जा सकता है जिसने सजा सुनाई है, या उसके उत्तराधिकारी द्वारा जारी किया जा सकता है।

हामिद रज़ा (सुप्रा) के मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने निम्नानुसार व्यवस्था दी है: -

> XXX XXX
>
> हमारी राय है कि याचिकाकर्ता द्वारा दावा की गई राहत नहीं दी जा सकती। सीआरपीसी की धारा 418 के तहत प्रक्रिया संहिता जहां अभियुक्त को आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है, सजा सुनाने वाली अदालत तुरंत उस जेल में एक वारंट भेज देगी जहां अभियुक्त को कैद किया जाना है। धारा 425 के तहत सजा के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारंट या तो न्यायाधीश द्वारा जारी किया जा सकता है या मजिस्ट्रेट जिसने सजा सुनाई, या उसके उत्तराधिकारी द्वारा। संहिता की धारा 31 के तहत यदि आरोपी को एक से अधिक अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, तो सजाएं लगातार चलनी चाहिए जब तक कि अदालत यह निर्देश न दे कि ऐसी सजाएं एक साथ में चलेंगी | जो द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा सजा के निष्पादन के लिए जारी किए गए वारंट में स्वीकार किया गया था। यह उल्लेख करने में चूक की कि याचिकाकर्ता के खिलाफ दी गई सजाएं एक साथ चलनी थीं, जिसके परिणामस्वरूप जेल अधिकारियों ने सही ही मान लिया कि सजाएं लगातार चलनी थीं और इसलिए याचिकाकर्ता को रिहा नहीं किया गया, हालांकि उसने 14-5-1982 को चार साल की जेल की सजा सजा पूरी कर ली थी। जब इस तथ्य को जेल अधिकारियों के ध्यान में लाया गया विविध में इस न्यायालय के आदेश द्वारा केस नंबर सीआर 1231 ऑफ़ 1982 दिनांक 4-8-1983 जो 88-1983 को प्राप्त हुआ था, याचिकाकर्ता को तुरंत रिहा कर दिया गया। इसलिए, यह स्पष्ट है कि 14-5-1982 के बाद याचिकाकर्ता की अवैध हिरासत के लिए जेल अधिकारी बिल्कुल भी जिम्मेदार नहीं हैं। इन परिस्थितियों में, अधीक्षक, केन्द्रीय जेल, रायपुर न ही म.प्र. राज्य याचिकाकर्ता की अवैध हिरासत के लिए क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

XXX XXX

5. अब प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, रीवा, जिसने हिरासत वारंट जारी किया था, को हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है क्योंकि न्यायालय वारंट में यह उल्लेख करने में विफल रहा कि याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित दो सजाएं एक साथ चलनी थीं। इस तथ्य का उल्लेख न करने के परिणामस्वरूप जेल अधिकारियों ने यह मान लिया कि सज़ाएँ लगातार चलनी थीं। न्यायिक रूप से कार्य करने वाले मजिस्ट्रेटों और अन्य लोगों की सुरक्षा के लिए, न्यायिक अधिकारी संरक्षण अधिनियम, 1850 अधिनियमित किया गया था।

XXX XXX

इस मामले में वारंट द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा सीआरपीसी की धारा 425 के तहत जारी किया गया था । यह प्रक्रिया द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा अपने न्यायिक कार्य करते किया गया। इसलिए, वह न्यायिक अधिकारी संरक्षण अधिनियम की धारा 1 के तहत पूरी तरह से संरक्षित है, इस तथ्य के बावजूद कि वारंट में यह उल्लेख करने में गलती हुई थी कि दोनों सजाएं एक साथ चलनी थीं।

XXX XXX

7. जो भी हो, यहां पीठासीन न्यायाधीश द्वारा दंड संहिता की धारा 425 के तहत वारंट जारी किया गया था। और यह प्रक्रिया उन्होंने न्यायिक कार्य करते हुए किया और इसे मंत्रिस्तरीय कार्य नहीं कहा जा सकता। अगर वारंट कोर्ट के क्लर्क द्वारा जारी किया गया होता तो शायद चीजें अलग होतीं।

8. परिणामस्वरूप याचिका विफल हो जाती है और इसे खारिज कर दिया जाता है।"

उपरोक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलेगा कि उसमें यह देखा गया था कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, सीआरपीसी की धारा 425 के तहत वारंट जारी करते समय, अपने न्यायिक कार्य कर रहे हैं और इसे एक मंत्रिस्तरीय कार्य नहीं कहा जा सकता है।

इस प्रकार, 29.11.2006 को जारी किया गया दोषसिद्धि वारंट एक न्यायिक अधिनियम था। उक्त दोषसिद्धि वारंट, वास्तव में, याचिकाकर्ता को दोषी ठहराने और सजा देने के परीक्षण न्यायालय के फैसले के विपरीत नहीं था, और वास्तव में, उक्त वारंट को उस क्रम के साथ पढ़ा गया था जिसमें परीक्षण न्यायालय द्वारा सजा दी गई थी और साथ ही इस तथ्य के प्रकाश में कि इस प्रभाव के लिए कोई विशिष्ट निर्देश नहीं था कि सजा की अवधि आजीवन कारावास होनी थी, इससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि

सजा की अवधि आजीवन कारावास के साथ-साथ चलनी थी और विचारण न्यायाधीश के उक्त इरादे को ध्यान में न रखते हुए, दोषसिद्धि वारंट को विकृत तरीके से निपटाया गया था।

iii) आक्षेपित आदेश इस तथ्य पर ध्यान देने में विफल रहा है कि दोषसिद्धि वारंट से स्वतंत्र होने पर भी, सजा के आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि यह यह निर्देश नहीं देता है कि सजा की अवधि आजीवन कारावास की सजा से पहले शुरू होनी चाहिए। और यहां तक कि जिस क्रम में वाक्यों का उल्लेख किया गया है, वह दिखाएगा कि आजीवन कारावास की सजा को पहली सजा बताया गया था, जिसके बाद 1959 के अधिनियम की धारा 25 के तहत प्रत्येक पांच साल की दो अवधि की सजा दी गई थी। स्थिति, सजा के आदेश को स्पष्ट रूप से पढ़ने से पता चलता है कि सजा की अवधि **मुथुरामलिंगम के मामले** (सुप्रा) और में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार, आजीवन कारावास की सजा के बाद शुरू होनी थी। **ओ.एम.चेरियन @ थैंकाचन (सुप्रा) के मामले** और **विकास यादव** (सुप्रा) के मामले में, यह एक असंभव/अव्यवहारिक स्थिति को जन्म देगा, क्योंकि आजीवन कारावास का तात्पर्य किसी के जीवन की पूरी अवधि के लिए कारावास से है, इस प्रकार, कोई सवाल ही नहीं होगा। आजीवन कारावास की सजा भुगतने के बाद कोई भी व्यक्ति आगे की सजा भुगत रहा है। इस प्रकार, ऐसी स्थिति में, यह **अनिवार्य रूप** से यह होगा कि ये सजाएं आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलेंगी। यद्यपि निर्णयों को आक्षेपित आदेश के पैराग्राफ 2 में देखा गया था, लेकिन उन पर विचार नहीं किया गया |

iv) यह कि आक्षेपित आदेश सीआरपीसी की धारा 427(2) के प्रावधानों पर ध्यान देने में विफल रहा। उक्त प्रावधान का अवलोकन, जिसे यहां ऊपर प्रस्तुत किया गया है, यह दिखाएगा कि ऐसे मामले में भी जहां एक व्यक्ति को दो अलग-अलग मामलों में दो बार दोषी ठहराया गया हो। परीक्षणों का तात्पर्य यह है कि ऐसे मामले में जहां वह पहले से ही आजीवन कारावास की सजा काट रहा है और बाद में दोषी ठहराए जाने पर उसे एक अवधि के लिए कारावास की सजा सुनाई जाती है या आजीवन कारावास, अगली सजा ऐसी

पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी। चूंकि वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता को "एकल लेनदेन" के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है, यानी एक घटना में, इस प्रकार, उसका मामला उस व्यक्ति के मामले की तुलना में उच्च स्तर पर है जिसने दो अलग-अलग घटनाओं में, दो अलग-अलग अपराध किए हैं।

v) आक्षेपित आदेश इस तथ्य पर विचार नहीं करता है कि दोषसिद्धि वारंट 29.11.2006 को जारी किया गया था, जिसमें यह विशेष रूप से कहा गया था कि सभी मूल सजाएं एक साथ चलेंगी और उक्त वारंट को चुनौती देने वाला वर्तमान आवेदन बाद में पेश किया गया था। 13 वर्ष की अवधि और आक्षेपित आदेश 07.10.2021 को पारित किया गया था, जब याचिकाकर्ता की रिहाई का मामला अंतिम चरण में था, और इस प्रकार, यह याचिकाकर्ता द्वारा इन सभी वर्षों के संबंध में की गई वैध अपेक्षा के विपरीत है। उनकी रिहाई और यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि न तो उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के आधार पर, न ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपील के आधार पर, याचिकाकर्ता ने सजा को एक साथ चलाने की मांग की थी। यदि, उक्त वारंट जारी होने के तुरंत बाद वारंट को कोई चुनौती दी गई थी, और यदि याचिकाकर्ता के खिलाफ उक्त मुद्दे का फैसला किया गया था, तो, याचिकाकर्ता को सजा के उक्त मुद्दे को अदालत के समक्ष उठाने का अवसर मिला होगा। इस न्यायालय की खंडपीठ या माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष। इसके अलावा, प्रतिवादी सं.1 ने 13 वर्षों तक लंबे समय तक इंतजार किया, और वर्तमान आवेदन तब पेश किया जब पीठासीन अधिकारी, जिसने सजा का आदेश पारित किया था और दोषसिद्धि वारंट जारी किया था, अब अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ का पद नहीं संभाल रहा था।

vi) आक्षेपित आदेश इस तथ्य पर ध्यान देने में विफल है कि परीक्षण न्यायालय ने दिनांक 29.11.2006 को सजा के आदेश में देखा था कि याचिकाकर्ता का अपराध करने का कोई मकसद नहीं था, न ही उक्त अपराध करने की कोई

पूर्व योजना थी। क्योंकि अपराध घटना संयोगवश घटी थी और घटना स्थल पर ही परिस्थितियाँ विकसित हो गई थीं और यह मृत व्यक्ति ही थे जिन्होंने दोषी के परिसर की यात्रा की थी। उक्त टिप्पणियाँ पेपर बुक के पृष्ठ 84 पर की गई थीं। यहां तक कि याचिकाकर्ता के वकील की इस दलील पर भी सुनवाई में गौर किया गया कि याचिकाकर्ता पहली बार अपराधी था, जिसके खिलाफ पहले कोई दोषसिद्धि नहीं हुई थी और यह तथ्य कि याचिकाकर्ता परिवार में कमाने वाला एकमात्र व्यक्ति था। न्यायालय, जैसा कि पेपर बुक के पृष्ठ 77 से स्पष्ट है। दिनांक 29.11.2006 के फैसले के पैरा 32 से पता चलता है कि मामले में डी डब्ल्यू 1 डॉ. अलंकृता की जांच की गई थी और उन्होंने याचिकाकर्ता की मेडिको-लीगल रिपोर्ट पेश की थी और याचिकाकर्ता को घुटने के जोड़ के ऊपर एक छेददार घाव उल्टे काले हाशिये के साथ पाया गया था। उक्त तथ्यों पर भी आक्षेपित आदेश में विचार नहीं किया गया है।

vii) आक्षेपित आदेश इस तथ्य पर भी विचार करने में विफल रहा कि किसी आपराधिक मामले में जब दो विचार संभव हों, तब भी, आरोपी के पक्ष में विचार किया जाना चाहिए, क्योंकि यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि संदेह का कोई भी लाभ आरोपी के पास जाना होगा|

viii) याचिकाकर्ता, हिरासत प्रमाण पत्र के अनुसार, 10.11.2021 तक 18 साल, 8 महीने और 18 दिन की वास्तविक सजा और छूट सहित कुल 25 साल, 2 महीने और 19 दिन की सजा काट चुका है और यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है, जिसे इस न्यायालय ने वर्तमान मामले पर फैसला सुनाते समय ध्यान में रखा है।

(25) इस स्तर पर, प्रतिवादी संख्या 1 के वकील के प्रति निष्पक्ष होना, सीआरपीसी की धारा 482 के तहत दायर वर्तमान याचिका की विचारणीयता के संबंध में उनके द्वारा उठाई गई आपत्ति का भी निपटारा किया जा रहा है। उस प्रस्ताव के साथ कोई झगड़ा नहीं है जिसे प्रतिवादी नंबर 1 के वकील द्वारा इस आशय से प्रतिपादित करने की मांग की गई है कि सीआरपीसी की धारा 482 के तहत संपार्श्विक कार्यवाही में, शब्दों को निर्णय में नहीं पढ़ा जा सकता है, इसके अलावा जब अपील की जाती है और आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध आगे की अपील खारिज कर दी गई है। उक्त प्रस्ताव के लिए, प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वकील ने एम.आर. कुडवा के मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है।

इस न्यायालय ने उक्त तर्कों और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्णय पर भी विचार किया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष मामले में, तथ्य मौजूदा मामले से भिन्न थे। उक्त मामले में, विशेष न्यायाधीश, सीबीआई द्वारा 04.07.1997 और 06.08.1997 को दो अलग-अलग आपराधिक मामलों में आरोपी को दोषी ठहराया गया था। विशेष न्यायाधीश ने, दूसरे मामले में दोषसिद्धि का फैसला सुनाते हुए, इस तथ्य पर ध्यान दिया कि अभियुक्त को पहले दोषी ठहराया गया था और कहा कि वह किसी भी सहानुभूति का पात्र नहीं था और आगे देखा कि उस पर लगाए गए कारावास की सजा जारी रहेगी। समवर्ती रूप से। दोनों निर्णयों के खिलाफ अपील, साथ ही विशेष अनुमति याचिकाएं खारिज कर दी गईं, और उसके बाद सीआरपीसी की धारा 482 आर/डब्ल्यू 427 के तहत एक स्वतंत्र याचिका दायर की गई। सजाएँ एक साथ चलाने की प्रार्थना करते हुए उच्च न्यायालय में याचिका दायर की गई थी। उक्त पृष्ठभूमि में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने देखा था कि सीआरपीसी की धारा 427 के प्रावधान। उस समय लागू नहीं किया गया था जब मामले में मूल मामला या अपील लंबित थी और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष मामले को खारिज करने के बाद ही, धारा 482 आर/डब्ल्यू 427 के तहत एक स्वतंत्र याचिका दायर की गई थी, जिसे चलने योग्य नहीं माना गया। वर्तमान मामले में, यह प्रतिवादी नंबर 1 है जिसने अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ के समक्ष आवेदन दायर किया था। यह उनके आवेदन पर है कि विवादित आदेश पारित किया गया है और जो स्थिति 2006 से तय थी, उसे अस्थिर कर दिया गया है और याचिकाकर्ता जो रिहा होने की प्रक्रिया में था, उसे विवादित आदेश के अनुपालन में कई वर्षों के लिए और कारावास से गुजरना होगा। इसमें कोई विवाद नहीं है कि सत्र न्यायालय के आदेश को सीआर पी सी की धारा 482 के तहत कार्यवाही में चुनौती दी जा सकती है। इस न्यायालय के समक्ष| वर्तमान याचिका में सीआरपीसी की धारा 482 के तहत प्रार्थना की गई है। दिनांक 07.10.2021 के आदेश को रद्द करने के लिए है और प्रार्थना सज़ा के क्रम में किसी भी शब्द को पढ़ने या उसकी समीक्षा करने के लिए नहीं है। चूंकि, आक्षेपित आदेश में, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चंडीगढ़ ने बिंदु पर प्रासंगिक कानून पर विचार किए बिना और इस तथ्य पर विचार किए बिना कि आवेदन चलने योग्य नहीं था, दिनांक 29.11.2006 को सजा के आदेश के आयात पर विचार किया था, इस प्रकार, यह भीतर है इस न्यायालय का दायरा उक्त आदेश को रद्द करना और याचिकाकर्ता के कानूनी अधिकारों की रक्षा करना है। आगे यह देखा गया कि इस न्यायालय ने दोषसिद्धि के फैसले दिनांक 23.11.2006 या सजा के आदेश दिनांक 29.11.2006 में कोई शब्द नहीं जोड़ा है, और केवल दिनांक 7.10.2021 के विवादित आदेश की वैधता पर विचार किया है।

(26) उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान याचिका स्वीकार की जाती है और आक्षेपित आदेश दिनांक 07.10.2021 को रद्द कर दिया गया। है और प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा सीआरपीसी की धारा 362 के साथ पठित धारा 353 के तहत दायर आवेदन को बर्खास्त कर दिया गया है।

(27) इस फैसले से अलग होने से पहले, **सुनील कुमार @सुधीर कुमार** (सुप्रा) के मामले के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पैरा 21 पर ध्यान देना प्रासंगिक होगा। उसी का पैरा 21 यहां पुन: प्रस्तुत किया गया है।-

> **"21. मामले को समाप्त करते समय, हम नागराज राव (सुप्रा) के मामले में जो बताया गया था उसे दोहराना उचित समझते हैं, कि प्रथम दृष्टया न्यायालय के लिए कारावास की कई सजाएं देते समय स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट करना कानूनी रूप से अनिवार्य है। इस बात पर ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं है कि प्रथम दृष्टया न्यायालय द्वारा इस दायित्व को पूरा करने में कोई भी चूक पक्षों के लिए अनावश्यक और टालने योग्य पूर्वाग्रह का कारण बनती है, चाहे वह आरोपी हो या अभियोजन पक्ष हो।"**

यहां ऊपर दिए गए पैरा के अवलोकन से पता चलता है कि यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि एक मुकदमे में कारावास की कई सजाएं देते समय प्रथम दृष्टया न्यायालय के लिए यह कानूनी रूप से अनिवार्य है कि वह स्पष्ट शब्दों में निर्दिष्ट करे कि क्या सजाएं एक साथ चलेंगी। या लगातार, चूंकि प्रथम दृष्टया न्यायालय द्वारा इस दायित्व को पूरा करने में चूक से पार्टियों पर अनावश्यक और अनुचित पूर्वाग्रह होता है, चाहे वह अभियुक्त हो या अभियोजन पक्ष हो

(28) यह स्पष्ट है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय की उक्त टिप्पणियाँ या तो परीक्षण न्यायाधीशों की जानकारी में नहीं हैं, या उनका परिश्रमपूर्वक पालन नहीं किया जा रहा है, जो मूल मुकदमे का निर्णय कर रहे हैं और उसी के कारण, पक्षकार हैं। मामले का अंतिम निर्णय गुण-दोष के आधार पर होने के बाद भी, कई दौर तक मुकदमेबाजी करनी पड़ी।

(29) उपरोक्त के मद्देनजर, यह न्यायालय दोहराता है कि प्रथम दृष्टया न्यायालय को एक मुकदमे में कारावास की कई सजाएं देते समय, स्पष्ट शब्दों में निर्दिष्ट करना चाहिए, कि क्या उक्त सजाएं समवर्ती या लगातार चलेंगी और मामले में, वे लगातार चलना था, जिस क्रम (अनुक्रम) में वही चलेगा।

(30) इस न्यायालय के रजिस्ट्रार न्यायिक से अनुरोध है कि वर्तमान निर्णय को पंजाब, हरियाणा के सभी परीक्षण न्यायालय के न्यायाधीशों और चंडीगढ़ में प्रसारित किया जाए।

(31) यह न्यायालय श्री सुमीत गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री गौरव वर्मा, अधिवक्ता और श्री करमबीर सिंह नलवा, अधिवक्ता, श्री चाकितन वी.एस. पप्ता वकील द्वारा प्रदान की गई सहायता की सराहना करता है, जिन्होंने प्रासंगिक कानून का हवाला देने का ईमानदार प्रयास किया है और इस मामले पर बहुत निष्पक्षता से बहस की है, विरोधियों के रूप में नहीं बल्कि न्यायालय के अधिकारियों के रूप में।

जे.एस. मेहंदीरत्ता

अस्वीकरण - स्थानीय भाषा में अनुवादित निणर्य वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्येश्य के लिए इसका उपयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

Vijay Kumar- Translator